# विष्णु सहस्त्रनाम पाठ (Hindi)

## ॥ श्रीहरिः ॥

**॥ अथ श्री विष्णु सहस्रनाम स्तोत्रम् ॥**

**यस्य स्मरणमात्रेण जन्मसंसारबन्धनात् ।**
**विमुच्यते नमस्तस्मै विष्णवे प्रभविष्णवे ।**

अर्थ – जिनके स्मरण करने मात्र से मनुष्य जन्म-मृत्यु रूप संसार बन्धन से मुक्त हो जाता है,
सबकी उत्पत्ति के कारणभूत उन भगवान विष्णु को नमस्कार है।

**नमः समस्तभूतानामादिभूताय भूभृते ।**
**अनेकरूपरूपाय विष्णवे प्रभविष्णवे ।**

अर्थ – सम्पूर्ण प्राणियों के आदिभूत, पृथ्वी को धारण करने वाले,
अनेक रूपधारी और सर्वसमर्थ भगवान विष्णु को प्रणाम है।

**[ वैशम्पायन उवाच ]**

**श्रुत्वा धर्मानशेषेण पावनानि च सर्वशः ।**
**युधिष्ठिरः शान्तनवं पुनरेवाभ्यभाषत ॥1॥**

अर्थ – [ वैशम्पायन जी कहते हैं ]
राजन् ! धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिर ने सम्पूर्ण विधिरूप धर्म
तथा पापों का क्षय करने वाले धर्म रहस्यों को सब प्रकार सुनकर शान्तनु पुत्र भीष्म से फिर पूछा ॥1॥

**[ युधिष्ठिर उवाच ]**

**किमेकं दैवतं लोके किं वाप्येकं परायणम् ।**
**स्तुवन्तः कं कमर्चन्तः प्राप्नुयुर्मानवाः शुभम् ॥2॥**

**अर्थ – [ युधिष्ठिर बोले ]**
समस्त जगत में एक ही देव कौन है ? तथा इस लोक में एक ही परम आश्रय स्थान कौन है ?
जिसका साक्षात्कार कर लेने पर जीव की अविद्यारूप हृदय-ग्रन्थि टूट जाती है,
सब संशय नष्ट हो जाते हैं तथा सम्पूर्ण कर्म क्षीण हो जाते हैं।
किस देव की स्तुति, गुण-कीर्तन करने से तथा किस देव का नाना प्रकार से बाह्य
और आन्तरिक पूजन करने से मनुष्य कल्याण की प्राप्ति कर सकते हैं ? ॥2॥

**को धर्मः सर्वधर्माणां भवतः परमो मतः ।**
**किं जपन्मुच्यते जन्तुर्जन्मसंसारबन्धनात् ॥3॥**

अर्थ – आप समस्त धर्मों में पूर्वोक्त लक्षणों से युक्त किस धर्म को परम श्रेष्ठ मानते हैं ?
तथा किसका जप करने से जीव जन्म-मरणरूप संसार बंधन से मुक्त हो जाता है ? ॥3॥

**[ भीष्म उवाच ]**

**जगत्प्रभुं देवदेवमनन्तं पुरुषोत्तमम् ।**
**स्तुवन्नामसहस्रेण पुरुषः सततोत्थितः ॥4॥**

**अर्थ – [ भीष्म जी ने कहा ]**
स्थावर जंगमरूप संसार के स्वामी, ब्रह्मादि देवों के देव,
देश-काल और वस्तु से अपरिच्छिन्न, क्षर-अक्षर से श्रेष्ठ पुरुषोत्तम का सहस्र नामों के द्वारा
निरन्तर तत्पर रह कर गुण-संकीर्तन करने से पुरुष सब दुःखों से पार हो जाता है ॥4॥

**तमेव चार्चयन्नित्यं भक्त्या पुरुषमव्ययम् ।**
**ध्यायन्स्तुवन्नमस्यंश्च यजमानस्तमेव च ॥5॥**

अर्थ – तथा उसी विनाशरहित पुरुष का सब समय भक्ति से युक्त होकर पूजन करने से,
उसी का ध्यान करने से तथा पूर्वोक्त प्रकार से सहस्र नामों के द्वारा
स्तवन एवं नमस्कार करने से पूजा करने वाला सब दुःखों से छूट जाता है ॥5॥

**अनादिनिधनं विष्णुं सर्वलोकमहेश्वरम् ।**
**लोकाध्यक्षं स्तुवन्नित्यं सर्वदुःखातिगो भवेत् ॥6॥**

अर्थ – उस जन्म-मृत्यु आदि छः भाव विकारों से रहित, सर्वव्यापक, सम्पूर्ण लोकों के महेश्वर,
लोकाध्यक्ष देव की निरन्तर स्तुति करने से मनुष्य सब दुःखों से पार हो जाता है ॥6॥

**ब्रह्मण्यं सर्वधर्मज्ञं लोकानां कीर्तिवर्धनम् ।**
**लोकनाथं महद्भूतं सर्वभूतभवोद्भवम् ॥7॥**

अर्थ – जगत की रचना करने वाले ब्रह्मा के तथा ब्राह्मण, तप और श्रुति के हितकारी,
सब धर्मों को जानने वाले, प्राणियों की कीर्ति को बढ़ाने वाले, सम्पूर्ण लोकों के स्वामी,
समस्त भूतों के उत्पत्ति स्थान एवं संसार के कारणरूप परमेश्वर का
स्तवन करने से मनुष्य सब दुःखों से छूट जाता है ॥7॥

**एष मे सर्वधर्माणां धर्मोऽधिकतमो मतः ।**
**यद्भक्त्या पुण्डरीकाक्षं स्तवैरर्चेन्नरः सदा ॥8॥**

अर्थ – विधिरूप सम्पूर्ण धर्मों में मैं इसी धर्म को सबसे बड़ा मानता हूँ
कि मनुष्य अपने हृदय कमल में विराजमान कमलनयन भगवान वासुदेव का
भक्तिपूर्वक तत्परता सहित गुण-संकीर्तन रूप स्तुतियों से सदा अर्चन करे ॥8॥

**परमं यो महत्तेजः परमं यो महत्तपः ।**
**परमं यो महद्ब्रह्म परमं यः परायणम् ॥9॥**

अर्थ – जो देव परम तेज, परम तप, परम ब्रह्म और परम परायण है,
वही समस्त प्राणियों की परम गति है ॥9॥

**पवित्राणां पवित्रं यो मङ्गलानां च मङ्गलम् ।**
**दैवतं देवतानां च भूतानां योऽव्ययः पिता ॥10॥।**

**यतः सर्वाणि भूतानि भवन्त्यादियुगागमे ।**
**यस्मिंश्च प्रलयं यान्ति पुनरेव युगक्षये ॥11॥।**

**तस्य लोकप्रधानस्य जगन्नाथस्य भूपते ।।**
**विष्णोर्नामसहस्रं मे शृणु पापभयापहम् ॥12॥**

अर्थ – पृथ्वीपते ! जो पवित्र करने वाले तीर्थादिकों में परम पवित्र है,
मंगलों का मंगल है, देवों का देव है तथा जो भूत प्राणियों का अविनाशी पिता है,
कल्प के आदि में जिससे सम्पूर्ण भूत उत्पन्न होते हैं और
फिर युग का क्षय होने पर महाप्रलय में जिसमें वे विलीन हो जाते हैं,
उस लोकप्रधान, संसार के स्वामी भगवान विष्णु के पाप और
संसार भय को दूर करने वाले हजार नामों को मुझसे सुन ॥10 – 12॥

**यानि नामानि गौणानि विख्यातानि महात्मनः ।**
**ऋषिभिः परिगीतानि तानि वक्ष्यामि भूतये ॥13॥**

अर्थ – जो नाम गुण के कारण प्रवृत्त हुए हैं, उनमें से जो-जो प्रसिद्ध हैं और मन्त्रद्रष्टा मुनियों द्वारा जो जहाँ-तहाँ सर्वत्र भगवत्कथाओं में गाये गये हैं, उस अचिन्त्य प्रभाव महात्मा के उन समस्त नामों को पुरुषार्थ सिद्धि के लिये वर्णन करता हूँ ॥13॥

**ॐ विश्वं विष्णुर्वषट्कारो भूतभव्यभवत्प्रभुः ।**
**भूतकृद् भूतभृद् भावो भूतात्मा भूतभावनः ॥14॥**

अर्थ – ॐ सच्चिदानन्द स्वरूप,
विश्वम् – समस्त जगत के कारणरूप,
विष्णुः – सर्वव्यापी,
वषट्कारः – जिनके उद्देश्य से यज्ञ में वषट्क्रिया की जाती है, ऐसे यज्ञस्वरूप,
भूतभव्यभवत्प्रभुः – भूत, भविष्य और वर्तमान के स्वामी,
भूतकृत् – रजोगुण का आश्रय लेकर ब्रह्मारूप से सम्पूर्ण भूतों की रचना करने वाले,
भूतभृत् – सत्त्वगुण का आश्रय लेकर सम्पूर्ण भूतों का पालन-पोषण करने वाले,
भावः – नित्यस्वरूप होते हुए भी स्वतः उत्पन्न होने वाले,
भूतात्मा – सम्पूर्ण भूतों के आत्मा अर्थात अन्तर्यामी,
भूतभावनः – भूतों की उत्पत्ति और वृद्धि करने वाले ॥14॥

**पूतात्मा परमात्मा च मुक्तानां परमा गतिः ।**
**अव्ययः पुरुषः साक्षी क्षेत्रज्ञोऽक्षर एव च ॥15॥**

अर्थ –
पूतात्मा – पवित्रात्मा,
परमात्मा – परम श्रेष्ठ नित्यशुद्ध-बुद्ध मुक्त स्वभाव,
मुक्तानां परमा गतिः – मुक्त पुरुषों की सर्वश्रेष्ठ गतिस्वरूप,
अव्ययः – कभी विनाश को प्राप्त न होने वाले,
पुरुषः – पुर अर्थात शरीर में शयन करने वाले,
साक्षी – बिना किसी व्यवधान के सब कुछ देखने वाले,
क्षेत्रज्ञः – क्षेत्र अर्थात समस्त प्रकृति रूप शरीर को पूर्णतया जानने वाले,
अक्षरः – कभी क्षीण न होने वाले ॥15॥

**योगो योगविदां नेता प्रधानपुरुषेश्वरः ।**
**नारसिंहवपुः श्रीमान्केशवः पुरुषोत्तमः ॥16॥**

अर्थ –

योगः – मनसहित सम्पूर्ण ज्ञानेन्द्रियों के निरोधरूप योग से प्राप्त होने वाले,

योगविदां नेता – योग को जानने वाले भक्तों के योगक्षेम आदि का निर्वाह करने में अग्रसर रहने वाले,

प्रधानपुरुषेश्वरः – प्रकृति और पुरुष के स्वामी,

नारसिंहवपुः – मनुष्य और सिंह दोनों के जैसा शरीर धारण करने वाले नरसिंह रूप,

श्रीमान् – वक्षःस्थल में सदा श्री को धारण करने वाले,

केशवः – ब्रह्मा, विष्णु और महादेव ( त्रिमूर्ति स्वरुप ),

पुरुषोत्तमः – क्षर और अक्षर इन दोनों से सर्वथा उत्तम ॥16॥

**सर्वः शर्वः शिवः स्थाणुर्भूतादिर्निधिरव्ययः ।**

**सम्भवो भावनो भर्ता प्रभवः प्रभुरीश्वरः ॥17॥**

अर्थ –

सर्वः – असत् और सत् , सबकी उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय के स्थान,

शर्वः – सारी प्रजा का प्रलयकाल में संहार करने वाले,

शिवः – तीनों गुणों से परे कल्याण स्वरुप,

स्थाणुः – स्थिर,

भूतादिः – भूतों के आदिकारण,

निधिरव्ययः – प्रलयकाल में सब प्राणियों के लीन होने के अविनाशी स्थानरूप,

सम्भवः – अपनी इच्छा से भली प्रकार प्रकट होने वाले,

भावनः – समस्त भोक्ताओं के फलों को उत्पन्न करने वाले,

भर्ता – सबका भरण करने वाले,

प्रभवः – दिव्य जन्म वाले,

प्रभुः – सबके स्वामी,

ईश्वरः – उपाधिरहित ऐश्वर्य वाले ॥17॥

**स्वयम्भूः शम्भुरादित्यः पुष्कराक्षो महास्वनः ।**

**अनादिनिधनो धाता विधाता धातुरुत्तमः ॥18॥**

अर्थ –

स्वयम्भूः – स्वयं उत्पन्न होने वाले,

शम्भुः – भक्तों के लिये सुख उत्पन्न करने वाले,

आदित्यः – द्वादश आदित्यों में विष्णु नामक आदित्य,

पुष्कराक्षः – कमल के समान नेत्र वाले,

महास्वनः – वेदरूप अत्यन्त महान घोष वाले,

अनादिनिधनः – जन्म मृत्यु से रहित,

धाता – विश्व को धारण करने वाले,

विधाता – कर्म और उसके फलों की रचना करने वाले,

धातुरुत्तमः – कार्य-कारणरूप सम्पूर्ण प्रपंच को धारण करने वाले एवं सर्वश्रेष्ठ ॥18॥

**अप्रमेयो हृषीकेशः पद्मनाभोऽमरप्रभुः ।**

**विश्वकर्मा मनुस्त्वष्टा स्थविष्ठः स्थविरो ध्रुवः ॥19॥**

अर्थ –

अप्रमेयः – प्रमाण आदि से जानने में न आ सकने वाले,

हृषीकेशः – इन्द्रियों के स्वामी,

पद्मनाभः – जगत के कारणरूप कमल को अपनी नाभि में स्थान देने वाले,

अमरप्रभुः – देवताओं के स्वामी,

विश्वकर्मा – सारे जगत की रचना करने वाले,

मनुः – प्रजापति मनुरूप,

त्वष्टा – संहार के समय सम्पूर्ण प्राणियों को क्षीण करने वाले,

स्थविष्ठः – अत्यन्त स्थूल,

स्थविरो ध्रुवः – अति प्राचीन एवं अत्यन्त स्थिर ॥19॥

**अग्राह्यः शाश्वतः कृष्णो लोहिताक्षः प्रतर्दनः ।**

**प्रभूतस्त्रिककुब्धाम पवित्रं मङ्गलं परम् ॥20॥**

अर्थ –

अग्राह्यः – मन से भी ग्रहण न किये जा सकने वाले,

शाश्वतः – सब काल में स्थित रहने वाले,
कृष्णः – सब के चित्त को बलात अपनी ओर आकर्षित करने वाले परमानन्द स्वरुप,
लोहिताक्षः – लाल नेत्रों वाले,
प्रतर्दनः – प्रलयकाल में प्राणियों का संहार करने वाले,
प्रभूतः – ज्ञान, ऐश्वर्य आदि गुणों से सम्पन्न,
त्रिककुब्धाम – ऊपर, नीचे और मध्य भेदवाली तीनों दिशाओं के आश्रयरुप,
पवित्रम् – सबको पवित्र करने वाले,
मङ्गलं परम् – परम मंगल स्वरुप ॥20॥

**ईशानः प्राणदः प्राणो ज्येष्ठः श्रेष्ठः प्रजापतिः ।**
**हिरण्यगर्भो भूगर्भो माधवो मधुसूदनः ॥21॥**

अर्थ –
ईशानः – सर्वभूतों के नियन्ता,
प्राणदः – सबके प्राण संशोधन करने वाले,
प्राणः – सबको जीवित रखने वाले प्राण स्वरुप,
ज्येष्ठः – सबके कारण होने से सबसे बड़े,
श्रेष्ठः – सबमें उत्कृष्ट होने से परम श्रेष्ठ,
प्रजापतिः – ईश्वर रूप से सारी प्रजाओं के मालिक,
हिरण्यगर्भः – ब्रह्माण्ड रूप हिरण्यमय अण्ड के भीतर ब्रह्मा रूप से व्याप्त होने वाले,
भूगर्भः – पृथ्वी के गर्भ में रहने वाले,
माधवः – लक्ष्मी के पति,
मधुसूदनः – मधु नामक दैत्य को मारने वाले ॥21॥

**ईश्वरो विक्रमी धन्वी मेधावी विक्रमः क्रमः ।**
**अनुत्तमो दुराधर्षः कृतज्ञः कृतिरात्मवान् ॥22॥**

अर्थ –
ईश्वरः – सर्वशक्तिमान ईश्वर,
विक्रमी – शूरवीरता से युक्त,

धन्वी – शार्ङ्ग धनुष रखने वाले,
मेधावी – अतिशय बुद्धिमान,
विक्रमः – गरुड़ पक्षी द्वारा गमन करने वाले,
क्रमः – क्रम विस्तार के कारण,
अनुत्तमः – सर्वोत्कृष्ट,
दुराधर्षः – किसी से भी तिरस्कृत न हो सकने वाले,
कृतज्ञः – अपने निमित्त से थोड़ा सा भी त्याग किये जाने पर उसे बहुत मानने वाले,
कृतिः – पुरुष प्रयत्न के आधार रूप,
आत्मवान् – अपनी ही महिमा में स्थित ॥22॥

**सुरेशः शरणं शर्म विश्वरेताः प्रजाभवः ।**
**अहः संवत्सरो व्यालः प्रत्ययः सर्वदर्शनः ॥23॥**

अर्थ –
सुरेशः – देवताओं के स्वामी,
शरणम् – दीन-दुःखियों के परम आश्रय,
शर्म – परमानन्द स्वरूप,
विश्वरेताः – विश्व के कारण,
प्रजाभवः – सारी प्रजा को उत्पन्न करने वाले,
अहः – प्रकाश रूप,
संवत्सरः – काल रूप से स्थित,
व्यालः – सर्प के समान ग्रहण करने में न आ सकने वाले,
प्रत्ययः – उत्तम बुद्धि से जानने में आने वाले,
सर्वदर्शनः – सब के द्रष्टा ॥23॥

**अजः सर्वेश्वरः सिद्धः सिद्धिः सर्वादिरच्युतः ।**
**वृषाकपिरमेयात्मा सर्वयोगविनिःसृतः ॥24॥**

अर्थ –
अजः – जन्मरहित,

सर्वेश्वरः – समस्त ईश्वरों के भी ईश्वर,
सिद्धः – नित्यसिद्ध,
सिद्धिः – सबके फल स्वरूप,
सर्वादिः – सर्वभूतों के आदि कारण,
अच्युतः – अपनी स्वरुप-स्थिति से कभी च्युत न होने वाले,
वृषाकपिः – धर्म और वराहरूप,
अमेयात्मा – अप्रमेय स्वरुप,
सर्वयोगविनिःसृतः – नाना प्रकार के शास्त्रोक्त साधनों से जानने में आने वाले ॥24॥

**वसुर्वसुमनाः सत्यः समात्मासम्मितः समः ।**
**अमोघः पुण्डरीकाक्षो वृषकर्मा वृषाकृतिः ॥25॥**

अर्थ –
वसुः – सब भूतों के वास स्थान,
वसुमनाः – उदार मन वाले,
सत्यः – सत्य स्वरुप,
समात्मा – सम्पूर्ण प्राणियों में एक आत्मा रूप से विराजने वाले,
असम्मितः – समस्त पदार्थों से मापे न जा सकने वाले,
समः – सब समय समस्त विकारों से रहित,
अमोघः – भक्तों के द्वारा पूजन, स्तवन अथवा स्मरण किये जाने पर
उन्हें पूर्णरूप से उनका फल प्रदान करने वाले,
पुण्डरीकाक्षः – कमल के समान नेत्रों वाले,
वृषकर्मा – धर्ममय कर्म करने वाले,
वृषाकृतिः – धर्म की स्थापना करने के लिये विग्रह धारण करने वाले ॥25॥

**रुद्रो बहुशिरा बभ्रुर्विश्वयोनिः शुचिश्रवाः ।**
**अमृतः शाश्वतः स्थाणुर्वरारोहो महातपाः ॥26॥**

अर्थ –
रुद्रः – दुःख या दुःख के कारण को दूर भगा देने वाले,

बहुशिराः – बहुत से सिरों वाले,
बभ्रुः – लोकों का भरण करने वाले,
विश्वयोनिः – विश्व को उत्पन्न करने वाले,
शुचिश्रवाः – पवित्र कीर्ति वाले,
अमृतः – कभी न मरने वाले,
शाश्वतस्थाणुः – नित्य सदा एकरस रहने वाले एवं स्थिर,
वरारोहः – आरूढ़ होने के लिये परम उत्तम स्थान रूप,
महातपाः – प्रताप रूप महान तप वाले ॥26॥

**सर्वगः सर्वविद्भानुर्विष्वक्सेनो जनार्दनः ।**
**वेदो वेदविदव्यङ्गो वेदाङ्गो वेदवित्कविः ॥27॥**

अर्थ –
सर्वगः – कारण रूप से सर्वत्र व्याप्त रहने वाले,
सर्वविद्भानुः – सब कुछ जानने वाले तथा प्रकाश रूप,
विष्वक्सेनः – युद्ध के लिये की हुई तैयारी मात्र से ही
दैत्य सेना को तितर-बितर कर डालने वाले,
जनार्दनः – भक्तों के द्वारा अभ्युदय-निःश्रेयस रूप
परम पुरुषार्थ की याचना किये जाने वाले,
वेदः – वेद रूप,
वेदवित् – वेद तथा वेद के अर्थ को यथावत जानने वाले,
अव्यङ्गः – ज्ञानादि से परिपूर्ण अर्थात किसी प्रकार अधूरे न रहने वाले,
वेदाङ्गः – वेद रूप अंगों वाले,
वेदवित् – वेदों को विचारने वाले,
कविः – सर्वज्ञ ॥27॥

**लोकाध्यक्षः सुराध्यक्षो धर्माध्यक्षः कृताकृतः ।**
**चतुरात्मा चतुर्व्यूहश्चतुर्दंष्ट्रश्चतुर्भुजः ॥28॥**

अर्थ –

लोकाध्यक्षः – समस्त लोकों के अधिपति,

सुराध्यक्षः – देवताओं के अध्यक्ष,

धर्माध्यक्षः – अनुरूप फल देने के लिये धर्म और अधर्म का निर्णय करने वाले,

कृताकृतः – कार्य रूप से कृत और कारण रूप से अकृत,

चतुरात्मा – सृष्टि की उत्पत्ति आदि के लिये चार पृथक मूर्तियों वाले,

चतुर्व्यूहः – उत्पत्ति, स्थिति, नाश और रक्षा रूप चार व्यूह वाले,

चतुर्दंष्ट्रः – चार दाढ़ों वाले नरसिंह रूप,

चतुर्भुजः – चार भुजाओं वाले ॥28॥

**भ्राजिष्णुर्भोजनं भोक्ता सहिष्णुर्जगदादिजः ।**

**अनघो विजयो जेता विश्वयोनिः पुनर्वसुः ॥29॥**

अर्थ –

भ्राजिष्णुः – एकरस प्रकाश स्वरुप,

भोजनम् – ज्ञानियों द्वारा भोगने योग्य अमृत स्वरुप,

भोक्ता – पुरुष रूप से भोक्ता,

सहिष्णुः – सहनशील,

जगदादिजः – जगत के आदि में हिरण्यगर्भ रूप से स्वयं उत्पन्न होने वाले,

अनघः – पापरहित,

विजयः – ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य आदि गुणों में सबसे बढ़कर,

जेता – स्वभाव से ही समस्त भूतों को जीतने वाले,

विश्वयोनिः – प्रकृति स्वरुप,

पुनर्वसुः – बार-बार शरीरों में आत्मरूप से बसने वाले ॥29॥

**उपेन्द्रो वामनः प्रांशुरमोघः शुचिरुर्जितः ।**

**अतीन्द्रः संग्रहः सर्गो धृतात्मा नियमो यमः ॥30॥**

अर्थ –

उपेन्द्रः – इन्द्र को अनुज रूप से प्राप्त होने वाले,

वामनः – वामन रूप से अवतार लेने वाले,
प्रांशुः – तीनों लोकों को लाँघने के लिये त्रिविक्रम रूप से ऊँचे होने वाले,
अमोघः – अव्यर्थ चेष्टा वाले,
शुचिः – स्मरण, स्तुति और पूजन करने वालों को पवित्र कर देने वाले,
ऊर्जितः – अत्यन्त बलशाली,
अतीन्द्रः – स्वयंसिद्ध ज्ञान, ऐश्वर्य आदि के कारण इन्द्र से भी बढ़े-चढ़े हुए,
संग्रहः – प्रलय के समय सबको समेट लेने वाले,
सर्गः – सृष्टि के कारण रुप,
धृतात्मा – जन्मादि से रहित रहकर स्वेच्छा से स्वरुप धारण करने वाले,
नियमः – प्रजा को अपने-अपने अधिकारों में नियमित करने वाले,
यमः – अन्तःकरण में स्थित होकर नियमन करने वाले ॥30॥

**वेद्यो वैद्यः सदायोगी वीरहा माधवो मधुः ।**
**अतीन्द्रियो महामायो महोत्साहो महाबलः ॥31॥**

अर्थ –
वेद्यः – कल्याण की इच्छा वालों के द्वारा जानने योग्य,
वैद्यः – सब विद्याओं के जानने वाले,
सदायोगी – सदा योग में स्थित रहने वाले,
वीरहा – धर्म की रक्षा के लिये असुर योद्धाओं को मार डालने वाले,
माधवः – विद्या के स्वामी,
मधुः – अमृत की तरह सबको प्रसन्न करने वाले,
अतीन्द्रियः – इन्द्रियों से सर्वथा अतीत,
महामायः – मायावियों पर भी माया डालने वाले, महान मायावी,
महोत्साहः – जगत की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय के लिये तत्पर रहने वाले परम उत्साही,
महाबलः – महान बलशाली ॥31॥

**महाबुद्धिर्महावीर्यो महाशक्तिर्महाद्युतिः ।**
**अनिर्देश्यवपुः श्रीमानमेयात्मा महाद्रिधृक् ॥32॥**

अर्थ –

महाबुद्धिः – महान बुद्धिमान,

महावीर्यः – महान पराक्रमी,

महाशक्तिः – महान सामर्थ्यवान,

महाद्युतिः – महान कान्तिमान,

अनिर्देश्यवपुः – अनिर्देश्य विग्रह वाले,

श्रीमान् – ऐश्वर्यवान,

अमेयात्मा – जिसका अनुमान न किया जा सके ऐसे आत्मा वाले,

महाद्रिधृक् – अमृत मंथन और गोरक्षण के समय मन्दराचल और गोवर्धन नामक महान पर्वतों को धारण करने वाले ॥32॥

**महेष्वासो महीभर्ता श्रीनिवासः सतां गतिः ।**
**अनिरुद्धः सुरानन्दो गोविन्दो गोविदां पतिः ॥33॥**

अर्थ –

महेष्वासः – महान धनुष वाले,

महीभर्ता – पृथ्वी को धारण करने वाले,

श्रीनिवासः – अपने वक्षःस्थल में श्री को निवास देने वाले,

सतां गतिः – सत्पुरुषों के परम आश्रय,

अनिरुद्धः – सच्ची भक्ति के बिना किसी के भी द्वारा न रुकने वाले,

सुरानन्दः – देवताओं को आनन्दित करने वाले,

गोविन्दः – वेदवाणी के द्वारा अपने को प्राप्त करा देने वाले,

गोविदां पतिः – वेदवाणी को जानने वालों के स्वामी ॥33॥

**मरीचिर्दमनो हंसः सुपर्णो भुजगोत्तमः ।**
**हिरण्यनाभः सुतपाः पद्मनाभः प्रजापतिः ॥34॥**

अर्थ –

मरीचिः – तेजस्वियों के भी परम तेजरूप,

दमनः – प्रमाद करने वाली प्रजा को यम आदि के रूप से दमन करने वाले,

हंसः – पितामह ब्रह्मा को वेद का ज्ञान कराने के लिये हंस रूप धारण करने वाले,
सुपर्णः – सुन्दर पंख वाले गरुड़ स्वरुप,
भुजगोत्तमः – सर्पों में श्रेष्ठ शेषनाग रूप,
हिरण्यनाभः – हितकारी और रमणीय नाभि वाले,
सुतपाः – बदरिकाश्रम में नर-नारायण रूप से सुन्दर तप करने वाले,
पद्मनाभः – कमल के समान सुन्दर नाभि वाले,
प्रजापतिः – सम्पूर्ण प्रजाओं के पालनकर्ता ॥34॥

**अमृत्युः सर्वदृक् सिंहः सन्धाता सन्धिमान्स्थिरः ।**
**अजो दुर्मर्षणः शास्ता विश्रुतात्मा सुरारिहा ॥35॥**

अर्थ –
अमृत्युः – मृत्यु से रहित,
सर्वदृक् – सब कुछ देखने वाले,
सिंहः – दुष्टों का विनाश करने वाले,
सन्धाता – पुरुषों को उनके कर्मों के फलों से संयुक्त करने वाले,
संधिमान् – सम्पूर्ण यज्ञ और तपों को भोगने वाले,
स्थिरः – सदा एकरूप,
अजः – भक्तों के हृदयों में जाने वाले तथा दुर्गुणों को दूर हटा देने वाले,
दुर्मर्षणः – किसी से भी सहन नहीं किये जा सकने वाले,
शास्ता – सब पर शासन करने वाले,
विश्रुतात्मा – वेदशास्त्रों में विशेष रूप से प्रसिद्ध स्वरुप वाले,
सुरारिहा – देवताओं के शत्रुओं को मारने वाले ॥35॥

**गुरुर्गुरुतमो धाम सत्यः सत्यपराक्रमः ।**
**निमिषोऽनिमिषः स्रग्वी वाचस्पतिरुदारधीः ॥36॥**

अर्थ –
गुरुः – सब विद्याओं का उपदेश करने वाले,
गुरुतमः – ब्रह्मा आदि को भी ब्रह्मविद्या प्रदान करने वाले,

धाम – सम्पूर्ण प्राणियों की कामनाओं के आश्रय,
सत्यः – सत्यस्वरूप,
सत्यपराक्रमः – अमोघ पराक्रम वाले,
निमिषः – योगनिद्रा से मुँदे हुए नेत्रों वाले,
अनिमिषः – मत्स्यरूप से अवतार लेने वाले,
स्रग्वी – वैजयन्ती माला धारण करने वाले,
वाचस्पतिरुदारधीः – सारे पदार्थों को प्रत्यक्ष करने वाली बुद्धि से
युक्त समस्त विद्याओं के पति ॥36॥

**अग्रणीर्ग्रामणीः श्रीमान्न्यायो नेता समीरणः ।**
**सहस्रमूर्धा विश्वात्मा सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥37॥**

अर्थ –
अग्रणीः – मुमुक्षुओं को उत्तम पद पर ले जाने वाले,
ग्रामणीः – भूत समुदाय के नेता,
श्रीमान् – सबसे बढ़ी-चढ़ी कान्ति वाले,
न्यायः – प्रमाणों के आश्रयभूत तर्क की मूर्ति,
नेता – जगत रूपी यन्त्र को चलाने वाले,
समीरणः – श्वास रूप से प्राणियों से चेष्टा कराने वाले,
सहस्रमूर्धा – हजार सिर वाले,
विश्वात्मा – विश्व के आत्मा,
सहस्राक्षः – हजार आँखों वाले,
सहस्रपात् – हजार पैरों वाले ॥37॥

**आवर्तनो निवृत्तात्मा संवृतः सम्प्रमर्दनः ।**
**अहःसंवर्तको वह्निरनिलो धरणीधरः ॥38॥**

अर्थ –
आवर्तनः – संसार चक्र को चलाने के स्वभाव वाले,
निवृत्तात्मा – संसार बन्धन से मुक्त आत्मस्वरूप,

संवृतः – अपनी योगमाया से ढके हुए,
सम्प्रमर्दनः – अपने रूद्र आदि स्वरुप से सबका मर्दन करने वाले,
अहःसंवर्तकः – सूर्यरूप से सम्यक्तया दिन के प्रवर्तक,
वह्निः – हवि को वहन करने वाले अग्निदेव,
अनिलः – प्राणरूप से वायु स्वरुप,
धरणीधरः – वराह और शेष रूप से पृथ्वी को धारण करने वाले ॥38॥

**सुप्रसादः प्रसन्नात्मा विश्वधृग्विश्वभुग्विभुः ।**
**सत्कर्ता सत्कृतः साधुर्जह्नुर्नारायणो नरः ॥39॥**

अर्थ –
सुप्रसादः – शिशुपाल आदि अपराधियों पर भी कृपा करने वाले,
प्रसन्नात्मा – प्रसन्न स्वभाव वाले अर्थात करुणा करने वाले,
विश्वधृक् – जगत् को धारण करने वाले,
विश्वभुक् – विश्व को भोगने वाले अर्थात विश्व का पालन करने वाले,
विभुः – विविध प्रकार से प्रकट होने वाले,
सत्कर्ता – भक्तों का सत्कार करने वाले,
सत्कृतः – पूजितों से भी पूजित,
साधुः – भक्तों के कार्य साधने वाले,
जह्नुः – संहार के समय जीवों का लय करने वाले,
नारायणः – जल में शयन करने वाले,
नरः – भक्तों को परमधाम में ले जाने वाले ॥39॥

**असंख्येयोऽप्रमेयात्मा विशिष्टः शिष्टकृच्छुचिः ।**
**सिद्धार्थः सिद्धसंकल्पः सिद्धिदः सिद्धिसाधनः ॥40॥**

अर्थ –
असंख्येयः – नाम और गुणों की संख्या से शून्य,
अप्रमेयात्मा – किसी से भी मापे न जा सकने वाले,
विशिष्टः – सबसे उत्कृष्ट,

शिष्टकृत् – शासन करने वाले,
शुचिः – परम शुद्ध,
सिद्धार्थः – इच्छित अर्थ को सर्वथा सिद्ध कर चुकने वाले,
सिद्धसंकल्पः – सत्य संकल्प वाले,
सिद्धिदः – कर्म करने वालों को उनके अधिकार के अनुसार फल देने वाले,
सिद्धिसाधनः – सिद्धिरूप क्रिया के साधक ॥40॥

**वृषाही वृषभो विष्णुर्वृषपर्वा वृषोदरः ।**
**वर्धनो वर्धमानश्च विविक्तः श्रुतिसागरः ॥41॥**

अर्थ –
वृषाही – यज्ञों को अपने में स्थित रखने वाले,
वृषभः – भक्तों के लिये इच्छित वस्तुओं की वर्षा करने वाले,
विष्णुः – शुद्ध सत्त्वमूर्ति,
वृषपर्वा – परमधाम में आरूढ़ होने की इच्छा वालों के लिये धर्मरूप सीढ़ियों वाले,
वृषोदरः – अपने उदर में धर्म को धारण करने वाले,
वर्धनः – भक्तों को बढ़ाने वाले,
वर्धमानः – संसार रूप से बढ़ने वाले,
विविक्तः – संसार से पृथक् रहने वाले,
श्रुतिसागरः – वेदरूप जल के समुद्र ॥41॥

**सुभुजो दुर्धरो वाग्मी महेन्द्रो वसुदो वसुः ।**
**नैकरूपो बृहद् रूपः शिपिविष्टः प्रकाशनः ॥42॥**

अर्थ –
सुभुजः – जगत की रक्षा करने वाली अति सुन्दर भुजाओं वाले,
दुर्धरः – दूसरों से धारण न किये जा सकने वाले,
वाग्मी – वेदमयी वाणी को उत्पन्न करने वाले,
महेन्द्रः – ईश्वरों के भी ईश्वर,
वसुदः – धन देने वाले,

वसुः – धनरूप,
नैकरूपः – अनेक रूपधारी,
बृहद् रूपः – विश्वरूप धारी,
शिपिविष्टः – सूर्य किरणों में स्थित रहने वाले,
प्रकाशनः – सबको प्रकाशित करने वाले ॥42॥

**ओजस्तेजोद्युतिधरः प्रकाशात्मा प्रतापनः ।**
**ऋद्धः स्पष्टाक्षरो मन्त्रश्चन्द्रांशुर्भास्करद्युतिः ॥43॥**

अर्थ –
ओजस्तेजोद्युतिधरः – प्राण और बल, शूरवीरता आदि गुण तथा
ज्ञान की दीप्ति को धारण करने वाले,
प्रकाशात्मा – प्रकाशरूप विग्रह वाले,
प्रतापनः – सूर्य आदि अपनी विभूतियों से विश्व को तप्त करने वाले,
ऋद्धः – धर्म, ज्ञान और वैराग्य आदि से सम्पन्न,
स्पष्टाक्षरः – ओंकार रूप स्पष्ट अक्षर वाले,
मन्त्रः – ऋक्, साम और यजुरूप मन्त्रों से जानने योग्य,
चन्द्रांशुः – संसार ताप से संतप्त चित्त पुरुषों को
चन्द्रमा की किरणों के समान आह्लादित करने वाले,
भास्करद्युतिः – सूर्य के समान प्रकाश स्वरूप ॥43॥

**अमृतांशूद्भवो भानुः शशबिन्दुः सुरेश्वरः ।**
**औषधं जगतः सेतुः सत्यधर्मपराक्रमः ॥44॥**

अर्थ –
अमृतांशूद्भवः – समुद्र मन्थन करते समय चन्द्रमा को उत्पन्न करने वाले समुद्र रूप,
भानुः – भासने वाले,
शशबिन्दुः – खरगोश के समान चिह्न वाले,
चन्द्रमा की तरह सम्पूर्ण प्रजा का पोषण करने वाले,
सुरेश्वरः – देवताओं के ईश्वर,

औषधम् – संसार रोग को मिटाने के लिये औषध रूप,
जगतः सेतुः – संसार सागर को पार कराने के लिये सेतुरूप,
सत्यधर्मपराक्रमः – सत्यरूप धर्म और पराक्रम वाले ॥44॥

**भूतभव्यभवन्नाथः पवनः पावनोऽनलः ।**
**कामहा कामकृत्कान्तः कामः कामप्रदः प्रभुः ॥45॥**

अर्थ –
भूतभव्यभवन्नाथः – भूत, भविष्य और वर्तमान सभी विषयों के स्वामी,
पवनः – वायुरूप,
पावनः – दृष्टि मात्र से जगत् को पवित्र करने वाले,
अनलः – अग्नि स्वरूप,
कामहा – अपने भक्तजनों के सकाम भाव को नष्ट करने वाले,
कामकृत् – भक्तों की कामनाओं को पूर्ण करने वाले,
कान्तः – कमनीय रूप,
कामः – ब्रह्मा (क), विष्णु (अ), महादेव (म) — इस प्रकार त्रिदेव रूप,
कामप्रदः – भक्तों को उनकी कामना की हुई वस्तुएँ प्रदान करने वाले,
प्रभुः – सर्वोत्कृष्ट सर्व सामर्थ्यवान् स्वामी ॥45॥

**युगादिकृद्युगावर्तो नैकमायो महाशनः ।**
**अदृश्योऽव्यक्तरूपश्च सहस्रजिदनन्तजित् ॥46॥**

अर्थ –
युगादिकृत् – युगादि का आरम्भ करने वाले,
युगावर्तः – चारों युगों को चक्र के समान घुमाने वाले,
नैकमायः – अनेकों मायाओं को धारण करने वाले,
महाशनः – कल्प के अन्त में सबको ग्रसन करने वाले,
अदृश्यः – समस्त ज्ञानेन्द्रियों के अविषय,
अव्यक्तरूपः – निराकार स्वरूप वाले,

सहस्रजित् – युद्ध में हजारों देवशत्रुओं को जीतने वाले,
अनन्तजित् – युद्ध और क्रीड़ा आदि में सर्वत्र समस्त भूतों को जीतने वाले ॥46॥

**इष्टोऽविशिष्टः शिष्टेष्टः शिखण्डी नहुषो वृषः ।**
**क्रोधहा क्रोधकृत्कर्ता विश्वबाहुर्महीधरः ॥47॥**

अर्थ –
इष्टः – परमानन्द रूप होने से सर्वप्रिय,
अविशिष्टः – सम्पूर्ण विशेषणों से रहित, सर्वश्रेष्ठ,
शिष्टेष्टः – शिष्ट पुरुषों के इष्टदेव,
शिखण्डी – मयूरपिच्छ को अपना शिरोभूषण बना लेने वाले,
नहुषः – भूतों को माया से बाँधने वाले,
वृषः – कामनाओं को पूर्ण करने वाले,
क्रोधहा – क्रोध का नाश करने वाले,
क्रोधकृत्कर्ता – दुष्टों पर क्रोध करने वाले और जगत् को उनके कर्मों के अनुसार रचने वाले,
विश्वबाहुः – सब ओर बाहुओं वाले, 317 महीधरः – पृथ्वी को धारण करने वाले ॥47॥

**अच्युतः प्रथितः प्राणः प्राणदो वासवानुजः ।**
**अपां निधिरधिष्ठानमप्रमत्तः प्रतिष्ठितः ॥48॥**

अर्थ –
अच्युतः – छः भाव विकारों से रहित,
प्रथितः – जगत् की उत्पत्ति आदि कर्मों के कारण,
प्राणः – हिरण्यगर्भ रूप से प्रजा को जीवित रखने वाले,
प्राणदः – सबका भरण-पोषण करने वाले,
वासवानुजः – वामन अवतार में कश्यप जी द्वारा अदिति से इन्द्र के अनुज रूप में उत्पन्न होने वाले,
अपां निधिः – जल को एकत्र रखने वाले समुद्र रूप,
अधिष्ठानम् – उपादान कारण रूप से सब भूतों के आश्रय,
अप्रमत्तः – अधिकारियों को उनके कर्मानुसार फल देने में कभी प्रमाद न करने वाले,
प्रतिष्ठितः – अपनी महिमा में स्थित ॥48॥

**स्कन्दः स्कन्दधरो धुर्यो वरदो वायुवाहनः ।**
**वासुदेवो बृहद्भानुरादिदेवः पुरन्दरः ॥49॥**

अर्थ –
स्कन्दः – स्वामी कार्तिकेय रूप,
स्कन्दधरः – धर्मपथ को धारण करने वाले,
धुर्यः – समस्त भूतों के जन्मादि रूप धुर को धारण करने वाले,
वरदः – इच्छित वर देने वाले,
वायुवाहनः – सारे वायुभेदों को चलाने वाले,
वासुदेवः – समस्त प्राणियों को अपने में बसाने वाले तथा
सब भूतों में सर्वात्मा रूप से बसने वाले दिव्य स्वरूप,
बृहद्भानुः – महान किरणों से युक्त एवं सम्पूर्ण जगत् को
प्रकाशित करने वाले,
आदिदेवः – सबके आदि कारण देव,
पुरन्दरः – असुरों के नगरों का ध्वंस करने वाले ॥49॥

**अशोकस्तारणस्तारः शूरः शौरिर्जनेश्वरः ।**
**अनुकूलः शतावर्तः पद्मी पद्मनिभेक्षणः ॥50॥**

अर्थ –
अशोकः – सब प्रकार के शोक से रहित,
तारणः – संसार सागर से तारने वाले,
तारः – जन्म, जरा, मृत्युरूप भय से तारने वाले,
शूरः – पराक्रमी,
शौरिः – शूरवीर श्री वसुदेव जी के पुत्र,
जनेश्वरः – समस्त जीवों के स्वामी,
अनुकूलः – आत्मा रूप होने से सबके अनुकूल,
शतावर्तः – धर्म रक्षा के लिये सैकड़ों अवतार लेने वाले,
पद्मी – अपने हाथ में कमल धारण करने वाले,
पद्मनिभेक्षणः – कमल के समान कोमल दृष्टि वाले ॥50॥

**पद्मनाभोऽरविन्दाक्षः पद्मगर्भः शरीरभृत् ।**
**महर्द्धिर्ऋद्धो वृद्धात्मा महाक्षो गरुडध्वजः ॥51॥**

अर्थ –
पद्मनाभः – हृदय कमल के मध्य निवास करने वाले,
अरविन्दाक्षः – कमल के समान आँखों वाले,
पद्मगर्भः – हृदय कमल में ध्यान करने योग्य,
शरीरभृत् – अन्न रूप से सबके शरीरों का भरण करने वाले,
महर्द्धिः – महान विभूति वाले,
ऋद्धः – सबमें बढ़े-चढ़े,
वृद्धात्मा – पुरातन आत्मवान्,
महाक्षः – विशाल नेत्रों वाले,
गरुडध्वजः – गरुड़ के चिह्न से युक्त ध्वजा वाले ॥51॥

**अतुलः शरभो भीमः समयज्ञो हविर्हरिः ।**
**सर्वलक्षणलक्षण्यो लक्ष्मीवान्समितिञ्जयः ॥52॥**

अर्थ –
अतुलः – तुलनारहित,
शरभः – शरीरों को प्रत्यगात्म रूप से प्रकाशित करने वाले,
भीमः – जिससे पापियों को भय हो ऐसे भयानक,
समयज्ञः – समभाव रूप यज्ञ से प्राप्त होने वाले,
हविर्हरिः – यज्ञों में हविर्भाग को और अपना स्मरण करने वालों के पापों को हरण करने वाले,
सर्वलक्षणलक्षण्यः – समस्त लक्षणों से लक्षित होने वाले,
लक्ष्मीवान् – अपने वक्षःस्थल में लक्ष्मी जी को सदा बसाने वाले,
समितिञ्जयः – संग्राम विजयी ॥52॥

**विक्षरो रोहितो मार्गो हेतुर्दामोदरः सहः ।**
**महीधरो महाभागो वेगवानमिताशनः ॥53॥**

अर्थ –

विक्षरः – नाशरहित,

रोहितः – मत्स्य विशेष का स्वरूप धारण करके अवतार लेने वाले,

मार्गः – परमानन्द प्राप्ति के साधन स्वरूप,

हेतुः – संसार के निमित्त और उपादान कारण,

दामोदरः – यशोदा जी द्वारा रस्सी से बँधे हुए उदर वाले,

सहः – भक्तजनों के अपराधों को सहन करने वाले,

महीधरः – पर्वत रूप से पृथ्वी को धारण करने वाले,

महाभागः – महान भाग्यशाली,

वेगवान् – तीव्र गति वाले,

अमिताशनः – सारे विश्व को भक्षण करने वाले ॥53॥

**उद्भवः क्षोभणो देवः श्रीगर्भः परमेश्वरः ।**

**करणं कारणं कर्ता विकर्ता गहनो गुहः ॥54॥**

अर्थ –

उद्भवः – जगत की उत्पत्ति के कारण,

क्षोभणः – जगत की उत्पत्ति के समय प्रकृति और

पुरुष में प्रविष्ट होकर उन्हें क्षुब्ध करने वाले,

देवः – प्रकाश स्वरूप,

श्रीगर्भः – सम्पूर्ण ऐश्वर्य को अपने उदरगर्भ में रखने वाले,

परमेश्वरः – सर्वश्रेष्ठ शासन करने वाले,

करणम् – संसार की उत्पत्ति के सबसे बड़े साधन,

कारणम् – जगत् के उपादान और निमित्त कारण,

कर्ता – सब प्रकार से स्वतन्त्र

विकर्ता – विचित्र भुवनों की रचना करने वाले,

गहनः – अपने विलक्षण स्वरूप, सामर्थ्य और लीलादि

के कारण पहचाने न जा सकने वाले,

गुहः – माया से अपने स्वरूप को ढक लेने वाले ॥54॥

**व्यवसायो व्यवस्थानः संस्थानः स्थानदो ध्रुवः ।**
**परर्द्धिः परमस्पष्टस्तुष्टः पुष्टः शुभेक्षणः ॥55॥**

अर्थ – व्यवसायः – ज्ञानमात्र स्वरूप,
व्यवस्थानः – लोकपालादिकों को, समस्त जीवों को, चारों वर्णाश्रमों को
एवं उनके धर्मों को व्यवस्थापूर्वक रचने वाले,
संस्थानः – प्रलय के सम्यक् स्थान,
स्थानदः – ध्रुव आदि भक्तों को स्थान देने वाले,
ध्रुवः – अविनाशी,
परर्द्धिः – श्रेष्ठ विभूति वाले,
परमस्पष्टः – अवतार विग्रह में सबके सामने प्रत्यक्ष प्रकट होने वाले,
तुष्टः – एकमात्र परमानन्द स्वरूप,
पुष्टः – सर्वत्र परिपूर्ण,
शुभेक्षणः – दर्शन मात्र से कल्याण करने वाले ॥55॥

**रामो विरामो विरजो मार्गो नेयो नयोऽनयः ।**
**वीरः शक्तिमतां श्रेष्ठो धर्मो धर्मविदुत्तमः ॥56॥**

अर्थ –
रामः – योगिजनों के स्मरण करने के लिये नित्यानन्द स्वरूप,
विरामः – प्रलय के समय प्राणियों को अपने में विराम देने वाले,
विरजः – रजोगुण तथा तमोगुण से सर्वथा शून्य,
मार्गः – मुमुक्षु जनों के अमर होने के साधन स्वरूप,
नेयः – उत्तम ज्ञान से ग्रहण करने योग्य,
नयः – सबको नियम में रखने वाले,
अनयः – स्वतन्त्र,
वीरः – पराक्रमशाली,
शक्तिमतां श्रेष्ठः – शक्तिमानों में भी अतिशय शक्तिमान,
धर्मः – श्रुति स्मृति रूप धर्म,
धर्मविदुत्तमः – समस्त धर्मवेत्ताओं में उत्तम ॥56॥

**वैकुण्ठः पुरुषः प्राणः प्राणदः प्रणवः पृथुः ।**
**हिरण्यगर्भः शत्रुघ्नो व्याप्तो वायुरधोक्षजः ॥57॥**

अर्थ –

वैकुण्ठः – परमधाम स्वरूप,
पुरुषः – विश्वरूप शरीर में शयन करने वाले,
प्राणः – प्राणवायु रूप से चेष्टा करने वाले,
प्राणदः – सर्ग के आदि में प्राण प्रदान करने वाले,
प्रणवः – जिसको वेद भी प्रणाम करते हैं, वे भगवान,
पृथुः – विराट रूप से विस्तृत होने वाले,
हिरण्यगर्भः – ब्रह्मारूप से प्रकट होने वाले,
शत्रुघ्नः – शत्रुओं को मारने वाले,
व्याप्तः – कारणरूप से सब कार्यों को व्याप्त करने वाले,
वायुः – पवनरूप,
अधोक्षजः – अपने स्वरूप से क्षीण न होने वाले ॥57॥

**ऋतुः सुदर्शनः कालः परमेष्ठी परिग्रहः ।**
**उग्रः संवत्सरो दक्षो विश्रामो विश्वदक्षिणः ॥58॥**

अर्थ –

ऋतुः – काल रूप से लक्षित होने वाले,
सुदर्शनः – भक्तों को सुगमता से ही दर्शन दे देने वाले,
कालः – सबकी गणना करने वाले,
परमेष्ठी – अपनी प्रकृष्ट महिमा में स्थित रहने के स्वभाव वाले,
परिग्रहः – शरणार्थियों के द्वारा सब ओर से ग्रहण किये जाने वाले,
उग्रः – सूर्यादि के भी भय के कारण,
संवत्सरः – सम्पूर्ण भूतों के वासस्थान,
दक्षः – सब कार्यों को बड़ी कुशलता से करने वाले,
विश्रामः – विश्राम की इच्छा वाले, मुमुक्षुओं को मोक्ष देने वाले,
विश्वदक्षिणः – बलि के यज्ञ में समस्त विश्व को दक्षिणा रूप में प्राप्त करने वाले ॥58॥

**विस्तारः स्थावरस्थाणुः प्रमाणं बीजमव्ययम् ।**
**अर्थोऽनर्थो महाकोशो महाभोगो महाधनः ॥59॥**

अर्थ –

विस्तारः – समस्त लोकों के विस्तार के कारण,

स्थावरस्थाणुः – स्वयं स्थितिशील रहकर पृथ्वी आदि स्थितिशील पदार्थों को अपने में स्थित रखने वाले,

प्रमाणम् – ज्ञानस्वरूप होने के कारण स्वयं प्रमाण रूप,

बीजमव्ययम् – संसार के अविनाशी कारण,

अर्थः – सुखस्वरूप होने के कारण सबके द्वारा प्रार्थनीय,

अनर्थः – पूर्णकाम होने के कारण प्रयोजन रहित,

महाकोशः – बड़े खजाने वाले,

महाभोगः – सुखरूप महान भोग वाले,

महाधनः – यथार्थ और अतिशय धन स्वरूप ॥59॥

**अनिर्विण्णः स्थविष्ठोऽभूर्धर्मयूपो महामखः ।**
**नक्षत्रनेमिर्नक्षत्री क्षमः क्षामः समीहनः ॥60॥**

अर्थ –

अनिर्विण्णः – उकताहट रूप विकार से रहित,

स्थविष्ठः – विराट् रूप से स्थित,

अभूः – अजन्मा,

धर्मयूपः – धर्म के स्तम्भ रूप,

महामखः – अर्पित किये हुए यज्ञों को निर्वाण रूप महान फलदायक बना देने वाले,

नक्षत्रनेमिः – समस्त नक्षत्रों के केन्द्र स्वरूप,

नक्षत्री – चन्द्र रूप,

क्षमः – समस्त कार्यों में समर्थ,

क्षामः – समस्त विकारों के क्षीण हो जाने पर परमात्म भाव से स्थित,

समीहनः – सृष्टि आदि के लिये भली भाँति चेष्टा करने वाले ॥60॥

**यज्ञ इज्यो महेज्यश्च क्रतुः सत्रं सतां गतिः ।**
**सर्वदर्शी विमुक्तात्मा सर्वज्ञो ज्ञानमुत्तमम् ॥61॥**

अर्थ –

यज्ञः – भगवान विष्णु,

इज्यः – पूजनीय,

महेज्यः – सबसे अधिक उपासनीय,

क्रतुः – यूपसंयुक्त यज्ञ स्वरूप,

सत्रम् – सत्पुरुषों की रक्षा करने वाले,

सतां गतिः – सत्पुरुषों के परम प्रापणीय स्थान,

सर्वदर्शी – समस्त प्राणियों को और उनके कार्यों को देखने वाले,

विमुक्तात्मा – सांसारिक बन्धन से रहित आत्मस्वरूप,

सर्वज्ञः – सबको जानने वाले,

ज्ञानमुत्तमम् – सर्वोत्कृष्ट ज्ञान स्वरूप ॥61॥

**सुव्रतः सुमुखः सूक्ष्मः सुघोषः सुखदः सुहृत् ।**
**मनोहरो जितक्रोधो वीरबाहुर्विदारणः ॥62॥**

अर्थ –

सुव्रतः – प्रणतपालनादि श्रेष्ठ व्रतों वाले,

सुमुखः – सुन्दर और प्रसन्न मुख वाले,

सूक्ष्मः – अणु से भी अणु,

सुघोषः – सुन्दर और गम्भीर वाणी बोलने वाले,

सुखदः – अपने भक्तों को सब प्रकार से सुख देने वाले,

सुहृत् – प्राणिमात्र पर अहैतुकी दया करने वाले परम मित्र,

मनोहरः – अपने रूप – लावण्य और मधुर भाषण आदि से सबके मन को हरने वाले,

जितक्रोधः – क्रोध पर विजय करने वाले अर्थात अपने साथ अत्यन्त
अनुचित व्यवहार करने वाले पर भी क्रोध न करने वाले,

वीरबाहुः – अत्यन्त पराक्रमशाली भुजाओं से युक्त,

विदारणः – अधर्मियों को नष्ट करने वाले ॥62॥

**स्वापनः स्ववशो व्यापी नैकात्मा नैककर्मकृत् ।**
**वत्सरो वत्सलो वत्सी रत्नगर्भो धनेश्वरः ॥63॥**

अर्थ –
स्वापनः – प्रलयकाल में समस्त प्राणियों को अज्ञान निद्रा में शयन कराने वाले,
स्ववशः – स्वतन्त्र,
व्यापी – आकाश की भाँति सर्वव्यापी,
नैकात्मा – प्रत्येक युग में लोकोद्धार के लिये अनेक रूप धारण करने वाले,
नैककर्मकृत् – जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलयरूप तथा भिन्न-भिन्न अवतारों में मनोहर लीलारूप अनेक कर्म करने वाले,
वत्सरः – सबके निवास स्थान,
वत्सलः – भक्तों के परम स्नेही,
वत्सी – वृन्दावन में बछड़ों का पालन करने वाले,
रत्नगर्भः – रत्नों को अपने गर्भ में धारण करने वाले समुद्र रूप,
धनेश्वरः – सब प्रकार के धनों के स्वामी ॥63॥

**धर्मगुब्धर्मकृद्धर्मी सदसत्क्षरमक्षरम् ।**
**अविज्ञाता सहस्रांशुर्विधाता कृतलक्षणः ॥64॥**

अर्थ –
धर्मगुप् – धर्म की रक्षा करने वाले,
धर्मकृत् – धर्म की स्थापना करने के लिये स्वयं धर्म का आचरण करने वाले,
धर्मी – सम्पूर्ण धर्मों के आधार,
सत् – सत्य स्वरूप,
असत् – स्थूल जगत्स्वरूप,
क्षरम् – सर्वभूतमय,
अक्षरम् – अविनाशी,
अविज्ञाता – क्षेत्रज्ञ जीवात्मा को विज्ञाता कहते हैं,
उनसे विलक्षण भगवान विष्णु,
सहस्रांशुः – हजारों किरणों वाले सूर्यस्वरूप,

विधाता – सबको अच्छी प्रकार धारण करने वाले,
कृतलक्षणः – श्रीवत्स आदि चिह्नों को धारण करने वाले ॥64॥

**गभस्तिनेमिः सत्त्वस्थः सिंहो भूतमहेश्वरः ।**
**आदिदेवो महादेवो देवेशो देवभृद्गुरुः ॥65॥**

अर्थ –
गभस्तिनेमिः – किरणों के बीच में सूर्य रूप से स्थित,
सत्त्वस्थः – अन्तर्यामी रूप से समस्त प्राणियों के अन्तःकरण में स्थित रहने वाले,
सिंहः – भक्त प्रह्लाद के लिये नृसिंह रूप धारण करने वाले,
भूतमहेश्वरः – सम्पूर्ण प्राणियों के महान ईश्वर,
आदिदेवः – सबके आदि कारण और दिव्य स्वरूप,
महादेवः – ज्ञानयोग और ऐश्वर्य आदि महिमाओं से युक्त,
देवेशः – समस्त देवों के स्वामी,
देवभृद्गुरुः – देवों का विशेष रूप से भरण-पोषण करने वाले उनके परम गुरु ॥65॥

**उत्तरो गोपतिर्गोप्ता ज्ञानगम्यः पुरातनः ।**
**शरीरभूतभृद्भोक्ता कपीन्द्रो भूरिदक्षिणः ॥66॥**

अर्थ –
उत्तरः – संसार समुद्र से उद्धार करने वाले और सर्वश्रेष्ठ,
गोपतिः – गोपाल रूप से गायों की रक्षा करने वाले,
गोप्ता – समस्त प्राणियों का पालन और रक्षा करने वाले,
ज्ञानगम्यः – ज्ञान के द्वारा जानने में आने वाले,
पुरातनः – सदा एकरस रहने वाले, सबके आदि पुराण पुरुष,
शरीरभूतभृत् – शरीर के उत्पादक पंचभूतों का प्राणरूप से पालन करने वाले,
भोक्ता – निरतिशय आनन्द पुंजों को भोगने वाले,
कपीन्द्रः – बंदरों के स्वामी श्रीराम,
भूरिदक्षिणः – श्रीरामादि अवतारों में यज्ञ करते समय
बहुत सी दक्षिणा प्रदान करने वाले ॥66॥

**सोमपोऽमृतपः सोमः पुरुजित्पुरुसत्तमः ।**
**विनयो जयः सत्यसंधो दाशार्हः सात्वतां पतिः ॥67॥**

अर्थ –

सोमपः – यज्ञों में देवरूप से और यजमान रूप से सोमरस का पान करने वाले,
अमृतपः – समुद्र मन्थन से निकाला हुआ अमृत देवों को पिला कर स्वयं पीने वाले,
सोमः – औषधियों का पोषण करने वाले चन्द्रमा रूप,
पुरुजित् – बहुतों पर विजय लाभ करने वाले,
पुरुसत्तमः – विश्वरूप और अत्यन्त श्रेष्ठ,
विनयः – दुष्टों को दण्ड देने वाले,
जयः – सब पर विजय प्राप्त करने वाले,
सत्यसंधः – सच्ची प्रतिज्ञा करने वाले,
दाशार्हः – दाशार्ह कुल में प्रकट होने वाले,
सात्वतां पतिः – यादवों के और अपने भक्तों के स्वामी
यानी उनका योगक्षेम चलाने वाले ॥67॥

**जीवो विनयितासाक्षी मुकुन्दोऽमितविक्रमः ।**
**अम्भोनिधिरनन्तात्मा महोदधिशयोऽन्तकः ॥68॥**

अर्थ –

जीवः – क्षेत्रज्ञ रूप से प्राणों को धारण करने वाले,
विनयितासाक्षी – अपने शरणापन्न भक्तों के विनय भाव को तत्काल प्रत्यक्ष अनुभव करने वाले,
मुकुन्दः – मुक्तिदाता,
अमितविक्रमः – वामनावतार में पृथ्वी नापते समय अत्यन्त विस्तृत पैर रखने वाले,
अम्भोनिधिः – जल के निधान समुद्र स्वरूप,
अनन्तात्मा – अनन्त मूर्ति,
महोदधिशयः – प्रलयकाल के महान समुद्र में शयन करने वाले,
अन्तकः – प्राणियों का संहार करने वाले मृत्यु स्वरूप ॥68॥

**अजो महार्हः स्वाभाव्यो जितामित्रः प्रमोदनः ।**
**आनन्दो नन्दनो नन्दः सत्यधर्मा त्रिविक्रमः ॥69॥**

अर्थ –
अजः – अकार भगवान विष्णु का वाचक है, उससे उत्पन्न होने वाले ब्रह्मा,
महार्हः – पूजनीय,
स्वाभाव्यः – नित्य सिद्ध होने के कारण स्वभाव से ही उत्पन्न न होने वाले,
जितामित्रः – रावण, शिशुपाल आदि शत्रुओं को जीतने वाले,
प्रमोदनः – स्मरण मात्र से नित्य प्रमुदित करने वाले,
आनन्दः – आनन्द स्वरूप,
नन्दनः – सबको प्रसन्न करने वाले,
नन्दः – सम्पूर्ण ऐश्वर्यों से सम्पन्न,
सत्यधर्मा – धर्म, ज्ञान आदि सब गुणों से युक्त,
त्रिविक्रमः – तीन
डग में तीनों लोकों को नापने वाले ॥69॥

**महर्षिः कपिलाचार्यः कृतज्ञो मेदिनीपतिः ।**
**त्रिपदस्त्रिदशाध्यक्षो महाशृङ्गः कृतान्तकृत् ॥70॥**

अर्थ –
महर्षिः कपिलाचार्यः – सांख्य शास्त्र के प्रणेता भगवान कपिलाचार्य,
कृतज्ञः – किये हुए को जानने वाले यानी अपने भक्तों की सेवा को
बहुत मानकर अपने को उनका ऋणी समझने वाले,
मेदिनीपतिः – पृथ्वी के स्वामी,
त्रिपदः – त्रिलोकी रूप तीन पैरों वाले विश्वरूप,
त्रिदशाध्यक्षः – देवताओं के स्वामी,
महाशृङ्गः – मत्स्यावतार में महान सींग धारण करने वाले,
कृतान्तकृत् – स्मरण करने वालों के समस्त कर्मों का अन्त करने वाले ॥70॥

**महावराहो गोविन्दः सुषेणः कनकाङ्गदी ।**
**गुह्यो गभीरो गहनो गुप्तश्चक्रगदाधरः ॥71॥**

अर्थ –
महावराहः – हिरण्याक्ष का वध करने के लिये महावराह रूप धारण करने वाले,
गोविन्दः – नष्ट हुई पृथ्वी को पुनः प्राप्त कर लेने वाले,
सुषेणः – पार्षदों के समुदाय रूप सुन्दर सेना से सुसज्जित,
कनकाङ्गदी – सुवर्ण का बाजूबंद धारण करने वाले,
गुह्यः – हृदयाकाश में छिपे रहने वाले,
गभीरः – अतिशय गम्भीर स्वभाव वाले,
गहनः – जिनके स्वरुप में प्रविष्ट होना अत्यन्त कठिन हो,
गुप्तः – वाणी और मन से जानने में न आनेवाले,
चक्रगदाधरः – भक्तों की रक्षा करने के लिये चक्र और गदा आदि
दिव्य आयुधों को धारण करने वाले ॥71॥

**वेधाः स्वाङ्गोऽजितः कृष्णो दृढः सङ्कर्षणोऽच्युतः ।**
**वरुणो वारुणो वृक्षः पुष्कराक्षो महामनाः ॥72॥**

अर्थ –
वेधाः – सब कुछ विधान करने वाले,
स्वाङ्गः – कार्य करने में स्वयं ही सहकारी,
अजितः – किसी के द्वारा न जीते जाने वाले,
कृष्णः – श्याम सुन्दर श्री कृष्ण,
दृढः – अपने स्वरुप और सामर्थ्य से कभी भी च्युत न होने वाले,
सङ्कर्षणोऽच्युतः – प्रलयकाल में एक साथ सबका संहार करने वाले
और जिनका कभी किसी भी कारण से पतन न हो सके ऐसे अविनाशी,
वरुणः – जल के स्वामी वरुण देवता,
वारुणः – वरुण के पुत्र वसिष्ठ स्वरुप,
वृक्षः – अश्वत्थ वृक्ष रूप,

पुष्कराक्षः – हृदय कमल में चिन्तन करने से प्रत्यक्ष होने वाले,
महामनाः – संकल्प मात्र से उत्पत्ति, पालन और संहार आदि समस्त लीला करने की शक्तिवाले। ॥72॥

**भगवान् भगहानन्दी वनमाली हलायुधः ।**
**आदित्यो ज्योतिरादित्यः सहिष्णुर्गतिसत्तमः ॥73॥**

अर्थ –
भगवान् – उत्पत्ति और प्रलय, आना और जाना तथा विद्या और अविद्या को
जानने वाले एवं सर्वैश्वर्यादि छहों भगों से युक्त,
भगहा – अपने भक्तों का प्रेम बढ़ाने के लिये उनके ऐश्वर्य का हरण करने वाले
और प्रलयकाल में सबके ऐश्वर्य को नष्ट करने वाले,
आनन्दी – परमसुख स्वरुप,
वनमाली – वैजयन्ती वनमाला धारण करने वाले,
हलायुधः – हलरूप शस्त्र को धारण करने वाले बलभद्र स्वरुप,
आदित्यः – अदितिपुत्र वामन भगवान,
ज्योतिरादित्यः – सूर्यमण्डल में विराजमान ज्योति स्वरुप,
सहिष्णुः – समस्त द्वन्द्वों को सहन करने में समर्थ,
गतिसत्तमः – सत्पुरुषों के परम गन्तव्य और सर्वश्रेष्ठ ॥73॥

**सुधन्वा खण्डपरशुर्दारुणो द्रविणप्रदः ।**
**दिविस्पृक्सर्वदृग्व्यासो वाचस्पतिरयोनिजः ॥74॥**

अर्थ –
सुधन्वा – अतिशय सुन्दर शार्ङ्ग धनुष धारण करने वाले,
खण्डपरशुः – शत्रुओं का खण्डन करने वाले, फरसे को धारण करने वाले परशुराम स्वरुप,
दारुणः – सन्मार्ग विरोधियों के लिये महान भयंकर,
द्रविणप्रदः – अर्थार्थी भक्तों को धन-सम्पत्ति प्रदान करने वाले,
दिविस्पृक् – स्वर्गलोक तक व्याप्त,
सर्वदृग् व्यासः – सबके द्रष्टा एवं वेद का विभाग करने वाले वेदव्यास स्वरुप,
वाचस्पतिरयोनिजः – विद्या के स्वामी तथा बिना योनि के स्वयं ही प्रकट होने वाले ॥74॥

**त्रिसामा सामगः साम निर्वाणं भेषजं भिषक् ।**
**संन्यासकृच्छमः शान्तो निष्ठा शान्तिः परायणम् ॥75॥**

अर्थ –
त्रिसामा – देवव्रत आदि तीन साम श्रुतियों द्वारा जिनकी स्तुति की जाती है,
सामगः – सामवेद का गान करने वाले,
साम – सामवेद स्वरुप,
निर्वाणम् – परम शान्ति के निधान परमानन्द स्वरुप,
भेषजम् – संसार रोग की ओषधि,
भिषक् – संसार रोग का नाश करने के लिये
गीतारूप उपदेशामृत का पान कराने वाले परम वैद्य,
संन्यासकृत् – मोक्ष के लिये संन्यासाश्रम और संन्यासयोग का निर्माण करने वाले,
शमः – उपशमता का उपदेश देने वाले,
शान्तः – परमशान्ताकृति,
निष्ठा – सबकी स्थिति के आधार अधिष्ठान स्वरुप,
शान्तिः – परम शान्ति स्वरुप,
परायणम् – मुमुक्षु पुरुषों के परम प्राप्य स्थान ॥75॥

**शुभाङ्गः शान्तिदः स्रष्टा कुमुदः कुवलेशयः ।**
**गोहितो गोपतिर्गोप्ता वृषभाक्षो वृषप्रियः ॥76॥**

अर्थ –
शुभाङ्गः – अति मनोहर परम सुन्दर अंगों वाले,
शान्तिदः – परमशान्ति देने वाले,
स्रष्टा – सर्ग के आदि में सबकी रचना करने वाले,
कुमुदः – पृथ्वी पर प्रसन्नतापूर्वक लीला करने वाले,
कुवलेशयः – जल में शेषनाग की शय्या पर शयन करने वाले,
गोहितः – गोपाल रूप से गायों का और अवतार धारण करके
भार उतार कर पृथ्वी का हित करने वाले,
गोपतिः – पृथ्वी के और गायों के स्वामी,

गोप्ता – अवतार धारण करके सबके सम्मुख प्रकट होते समय
अपनी माया से अपने स्वरुप को आच्छादित करने वाले,
वृषभाक्षः – समस्त कामनाओं की वर्षा करने वाली कृपादृष्टि से युक्त,
वृषप्रियः – धर्म से प्यार करने वाले ॥76॥

**अनिवर्ती निवृत्तात्मा संक्षेप्ता क्षेमकृच्छिवः ।**
**श्रीवत्सवक्षाः श्रीवासः श्रीपतिः श्रीमतां वरः ॥77॥**

अर्थ –
अनिवर्ती – रणभूमि में और धर्मपालन में पीछे न हटने वाले,
निवृत्तात्मा – स्वभाव से ही विषय वासना रहित नित्य शुद्ध मन वाले,
संक्षेप्ता – विस्तृत जगत को क्षणभर में संक्षिप्त यानी सूक्ष्मरूप करने वाले,
क्षेमकृत् – शरणागत की रक्षा करने वाले,
शिवः – स्मरणमात्र से पवित्र करने वाले कल्याण स्वरुप,
श्रीवत्सवक्षाः – श्रीवत्स नामक चिह्न को वक्षःस्थल में धारण करने वाले,
श्रीवासः – श्री लक्ष्मी जी के वासस्थान,
श्रीपतिः – परम शक्तिरूपा श्री लक्ष्मी जी के स्वामी,
श्रीमतां वरः – सब प्रकार की सम्पत्ति और ऐश्वर्य से
युक्त ब्रह्मादि समस्त लोकपालों से श्रेष्ठ ॥77॥

**श्रीदः श्रीशः श्रीनिवासः श्रीनिधिः श्रीविभावनः ।**
**श्रीधरः श्रीकरः श्रेयः श्रीमाँल्लोकत्रयाश्रयः ॥78॥**

अर्थ –
श्रीदः – भक्तों को श्री प्रदान करने वाले,
श्रीशः – लक्ष्मी के नाथ,
श्रीनिवासः – श्री लक्ष्मी जी के अन्तःकरण में नित्य निवास करने वाले,
श्रीनिधिः – समस्त श्रियों के आधार,
श्रीविभावनः – सब मनुष्यों के लिये उनके कर्मानुसार नाना प्रकार के ऐश्वर्य प्रदान करने वाले,
श्रीधरः – जगज्जननी श्री को वक्षःस्थल में धारण करने वाले,

श्रीकरः – स्मरण, स्तवन और अर्चन आदि करने वाले भक्तों के लिये श्री का विस्तार करने वाले,
श्रेयः – कल्याण स्वरूप,
श्रीमान् – सब प्रकार की श्रियों से युक्त,
लोकत्रयाश्रयः – तीनों लोकों के आधार ॥78॥

**स्वक्षः स्वङ्गः शतानन्दो नन्दिर्ज्योतिर्गणेश्वरः ।**
**विजितात्मा विधेयात्मा सत्कीर्तिश्छिन्नसंशयः ॥79॥**

अर्थ –
स्वक्षः – मनोहर कृपा कटाक्ष से युक्त परम सुन्दर आँखों वाले,
स्वङ्गः – अतिशय कोमल परम सुन्दर मनोहर अंगों वाले,
शतानन्दः – लीलाभेद से सैकड़ों विभागों में विभक्त आनन्द स्वरुप,
नन्दिः – परमानन्द विग्रह,
ज्योतिर्गणेश्वरः – नक्षत्र समुदायों के ईश्वर,
विजितात्मा – जीते हुए मन वाले,
अविधेयात्मा – जिनके असली स्वरुप का किसी प्रकार भी वर्णन नहीं किया जा सके,
सत्कीर्तिः – सच्ची कीर्ति वाले,
छिन्नसंशयः – हथेली में रखे हुए बेर के समान सम्पूर्ण विश्व को
प्रत्यक्ष देखने वाले होने के कारण सब प्रकार के संशयों से रहित ॥79॥

**उदीर्णः सर्वतश्चक्षुरनीशः शाश्वतस्थिरः ।**
**भूशयो भूषणो भूतिर्विशोकः शोकनाशनः ॥80॥**

अर्थ –
उदीर्णः – सब प्राणियों से श्रेष्ठ,
सर्वतश्चक्षुः – समस्त वस्तुओं को सब दिशाओं में सदा-सर्वदा देखने की शक्ति वाले,
अनीशः – जिनका दूसरा कोई शासक न हो, ऐसे स्वतंत्र,
शाश्वतस्थिरः – सदा एकरस स्थिर रहने वाले, निर्विकार,
भूशयः – लंका गमन के लिये मार्ग की याचना करते समय समुद्र तट की भूमि पर शयन करने वाले,
भूषणः – स्वेच्छा से नाना अवतार लेकर अपने चरण चिह्नों से भूमि की शोभा बढ़ाने वाले,

भूतिः – सत्ता स्वरूप और समस्त विभूतियों के आधार स्वरुप,
विशोकः – सब प्रकार से शोक रहित,
शोकनाशनः – स्मृति मात्र से भक्तों के शोक का समूल नाश करने वाले ॥80॥

**अर्चिष्मानर्चितः कुम्भो विशुद्धात्मा विशोधनः ।**
**अनिरुद्धोऽप्रतिरथः प्रद्युम्नोऽमितविक्रमः ॥81॥**

अर्थ –
अर्चिष्मान् – चन्द्र, सूर्य आदि समस्त ज्योतियों को देदीप्यमान करने वाली
अतिशय प्रकाशमय अनन्त किरणों से युक्त,
अर्चितः – समस्त लोकों के पूज्य ब्रह्मादि से भी पूजे जाने वाले,
कुम्भः – घट की भाँति सबके निवास स्थान,
विशुद्धात्मा – परम शुद्ध निर्मल आत्म स्वरूप,
विशोधनः – स्मरण मात्र से समस्त पापों का नाश करके
भक्तों के अन्तःकरण को परम शुद्ध कर देने वाले,
अनिरुद्धः – जिनको कोई बाँधकर नहीं रख सके,
अप्रतिरथः – प्रतिपक्ष से रहित,
प्रद्युम्नः – परमश्रेष्ठ अपार धन से युक्त,
अमितविक्रमः – अपार पराक्रमी ॥81॥

**कालनेमिनिहा वीरः शौरिः शूरजनेश्वरः ।**
**त्रिलोकात्मा त्रिलोकेशः केशवः केशिहा हरिः ॥82॥**

अर्थ –
कालनेमिनिहा – कालनेमि नामक असुर को मारने वाले,
वीरः – परम शूरवीर,
शौरिः – शूरकुल में उत्पन्न होने वाले श्रीकृष्ण स्वरुप,
शूरजनेश्वरः – अतिशय शूरवीरता के कारण इन्द्रादि शूरवीरों के भी इष्ट,
त्रिलोकात्मा – अन्तर्यामी रूप से तीनों लोकों के आत्मा,
त्रिलोकेशः – तीनों लोकों के स्वामी,

केशवः – सूर्य की किरण रूप केश वाले,
केशिहा – केशी नाम के असुर को मारने वाले,
हरिः – स्मरण मात्र से समस्त पापों का और समूल संसार का हरण करने वाले ॥82॥

**कामदेवः कामपालः कामी कान्तः कृतागमः ।**
**अनिर्देश्यवपुर्विष्णुर्वीरोऽनन्तो धनञ्जयः ॥83॥**

अर्थ –
कामदेवः – धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष – इन चारों पुरुषार्थों को चाहने वाले
मनुष्यों द्वारा अभिलषित समस्त कामनाओं के अधिष्ठाता परमदेव,
कामपालः – सकामी भक्तों की कामनाओं की पूर्ति करने वाले,
कामी – स्वभाव से ही पूर्ण काम और अपने प्रियतमों को चाहने वाले,
कान्तः – परम मनोहर श्याम सुन्दर देह धारण करने वाले गोपीजन वल्लभ,
कृतागमः – समस्त वेद और शास्त्रों को रचने वाले,
अनिर्देश्यवपुः – जिसके दिव्य स्वरुप का किसी प्रकार भी वर्णन नहीं किया जा सके,
विष्णुः – शेषशायी भगवान विष्णु,
वीरः – बिना पैरों के ही गमन करने आदि अनेक दिव्य शक्तियों से युक्त,
अनन्तः – जिनके स्वरुप, शक्ति, ऐश्वर्य, सामर्थ्य और गुणों का कोई भी पार नहीं पा सके,
धनञ्जयः – अर्जुन रूप से दिग्विजय के समय बहुत सा धन जीतकर लाने वाले ॥83॥

**ब्रह्मण्यो ब्रह्मकृद् ब्रह्मा ब्रह्म ब्रह्मविवर्धनः ।**
**ब्रह्मविद् ब्राह्मणो ब्रह्मी ब्रह्मज्ञो ब्राह्मणप्रियः ॥84॥**

अर्थ –
ब्रह्मण्यः – तप, वेद, ब्राह्मण और ज्ञान की रक्षा करने वाले,
ब्रह्मकृत् – पूर्वोक्त तप आदि की रचना वाले,
ब्रह्मा – ब्रह्मा रूप से जगत को उत्पन्न करने वाले,
ब्रह्म – सच्चिदानन्द स्वरुप,
ब्रह्मविवर्धनः – पूर्वोक्त ब्रह्मशब्द वाची तप आदि की वृद्धि करने वाले,
ब्रह्मवित् – वेद और वेदार्थ को पूर्णतया जानने वाले,

ब्राह्मणः – समस्त वस्तुओं को ब्रह्मरूप से देखने वाले,
ब्रह्मी – ब्रह्मशब्द वाची तपादि समस्त पदार्थों के अधिष्ठान,
ब्रह्मज्ञः – अपने आत्मस्वरूप ब्रह्मशब्द वाची वेद को पूर्णतया यथार्थ जानने वाले,
ब्राह्मणप्रियः – ब्राह्मणों के परम प्रिय और ब्राह्मणों को अतिशय प्रिय मानने वाले ॥84॥

**महाक्रमो महाकर्मा महातेजा महोरगः ।**
**महाक्रतुर्महायज्वा महायज्ञो महाहविः ॥85॥**

अर्थ –
महाक्रमः – बड़े वेग से चलने वाले,
महाकर्मा – भिन्न-भिन्न अवतारों में नाना प्रकार के महान कर्म करने वाले,
महातेजाः – जिसके तेज से समस्त तेजस्वी देदीप्यमान होते हैं,
महोरगः – बड़े भारी सर्प यानी वासुकि स्वरुप,
महाक्रतुः – महान यज्ञ स्वरूप,
महायज्वा – बड़े यजमान यानी लोक संग्रह के लिये बड़े-बड़े यज्ञों का अनुष्ठान करने वाले,
महायज्ञः – जप यज्ञ आदि भगवत्प्राप्ति के साधन रूप, समस्त यज्ञ जिनकी विभूतियाँ हैं – ऐसे महान यज्ञ स्वरूप,
महाहविः – ब्रह्मरूप अग्नि में हवन किये जाने योग्य प्रपंच रूप हवि जिनका स्वरुप है ॥85॥

**स्तव्यः स्तवप्रियः स्तोत्रं स्तुतिः स्तोता रणप्रियः ।**
**पूर्णः पूरयिता पुण्यः पुण्यकीर्तिरनामयः ॥86॥**

अर्थ –
स्तव्यः – सबके द्वारा स्तुति किये जाने योग्य,
स्तवप्रियः – स्तुति से प्रसन्न होने वाले,
स्तोत्रम् – जिनके द्वारा भगवान के गुण प्रभाव का कीर्तन किया जाता है, वह स्तोत्र,
स्तुतिः – स्तवन क्रिया स्वरुप,
स्तोता – स्तुति करने वाले,
रणप्रियः – युद्ध से प्रेम करने वाले,
पूर्णः – समस्त ज्ञान, शक्ति, ऐश्वर्य और गुणों से परिपूर्ण,

पूरयिता – अपने भक्तों को सब प्रकार से परिपूर्ण करने वाले,
पुण्यः – स्मरण मात्र से पापों का नाश करने वाले पुण्य स्वरुप,
पुण्यकीर्तिः – परम पावन कीर्ति वाले,
अनामयः – आन्तरिक और बाह्य, सब प्रकार की व्याधियों से रहित ॥86॥

**मनोजवस्तीर्थकरो वसुरेता वसुप्रदः ।**
**वसुप्रदो वासुदेवो वसुर्वसुमना हविः ॥87॥**

अर्थ –
मनोजवः – मन की भाँति वेग वाले,
तीर्थकरः – समस्त विद्याओं के रचयिता और उपदेशकर्ता,
वसुरेताः – हिरण्यमय पुरुष जिनका वीर्य है, ऐसे सुवर्णवीर्य,
वसुप्रदः – प्रचुर धन प्रदान करने वाले,
वसुप्रदः – अपने भक्तों को मोक्षरूप महान धन देने वाले,
वासुदेवः – वसुदेव पुत्र श्रीकृष्ण,
वसुः – सबके अन्तःकरण में निवास करने वाले,
वसुमनाः – समान भाव से सबमें निवास करने की शक्ति से युक्त मन वाले,
हविः – यज्ञ में हवन किये जाने योग्य हविः स्वरुप ॥87॥

**सद्गतिः सत्कृतिः सत्ता सद्भूतिः सत्परायणः ।**
**शूरसेनो यदुश्रेष्ठः सन्निवासः सुयामुनः ॥88॥**

अर्थ –
सद्गतिः – सत्पुरुषों द्वारा प्राप्त किये जाने योग्य गति स्वरुप,
सत्कृतिः – जगत की रक्षा आदि सत्कार्य करने वाले,
सत्ता – सदा सर्वदा विद्यमान सत्ता स्वरुप,
सद्भूतिः – बहुत प्रकार से बहुत रूपों में भासित होने वाले,
सत्परायणः – सत्पुरुषों के परम प्रापणीय स्थान,
शूरसेनः – हनुमानादि श्रेष्ठ शूरवीर योद्धाओं से युक्त सेना वाले,
यदुश्रेष्ठः – यदुवंशियों में सर्वश्रेष्ठ,

सन्निवासः – सत्पुरुषों के आश्रय,
सुयामुनः – जिनके परिकर यमुना तट निवासी गोपाल बाल
आदि अति सुन्दर हैं, ऐसे श्रीकृष्ण ॥88॥

**भूतावासो वासुदेवः सर्वासुनिलयोऽनलः ।**
**दर्पहा दर्पदो दृप्तो दुर्धरोऽथापराजितः ॥89॥**

अर्थ –
भूतावासः – समस्त प्राणियों के मुख्य निवास स्थान,
वासुदेवः – अपनी माया से जगत को आच्छादित करने वाले परम देव,
सर्वासुनिलयः – समस्त प्राणियों के आधार,
अनलः – अपार शक्ति और सम्पत्ति से युक्त,
दर्पहा – धर्म विरुद्ध मार्ग में चलने वालों के घमण्ड को नष्ट करने वाले,
दर्पदः – अपने भक्तों को विशुद्ध गौरव देने वाले,
दृप्तः – नित्यानन्द मग्न,
दुर्धरः – बड़ी कठिनता से हृदय में धारित होने वाले,
अपराजितः – दूसरों से अजित अर्थात भक्त परवश ॥89॥

**विश्वमूर्तिर्महामूर्तिर्दीप्तमूर्तिरमूर्तिमान् ।**
**अनेकमूर्तिरव्यक्तः शतमूर्तिः शताननः ॥90॥**

अर्थ –
विश्वमूर्तिः – समस्त विश्व ही जिनकी मूर्ति है – ऐसे विराट स्वरूप,
महामूर्तिः – बड़े रूप वाले,
दीप्तमूर्तिः – स्वेच्छा से धारण किये हुए देदीप्यमान स्वरुप से युक्त,
अमूर्तिमान् – जिनकी कोई मूर्ति नहीं – ऐसे निराकार,
अनेकमूर्तिः – नाना अवतारों में स्वेच्छा से लोगों का उपकार करने के लिये
बहुत मूर्तियों को धारण करने वाले,
अव्यक्तः – अनेक मूर्ति होते हुए भी जिनका स्वरुप
किसी प्रकार व्यक्त न किया जा सके – ऐसे अप्रकट स्वरुप,

शतमूर्तिः – सैकड़ों मूर्तियों वाले,
शताननः – सैकड़ों मुख वाले ॥90॥

**एको नैकः सवः कः किं यत्तत्पदमनुत्तमम् ।**
**लोकबन्धुर्लोकनाथो माधवो भक्तवत्सलः ॥91॥**

अर्थ –
एकः – सब प्रकार के भेद-भावों से रहित अद्‌वितीय,
नैकः – उपाधि भेद से अनेक,
सवः – जिनमें सोम नाम की ओषधि का रस निकाला जाता है, ऐसे यज्ञ स्वरूप,
कः – सुख स्वरूप,
किम् – विचारणीय ब्रह्म स्वरूप,
यत् – स्वतःसिद्‌ध,
तत् – विस्तार करने वाले,
पदमनुत्तमम् – मुमुक्षु पुरुषों द्‌वारा प्राप्त किये जाने योग्य अत्युत्तम परमपद,
लोकबन्धुः – समस्त प्राणियों के हित करने वाले परम मित्र,
लोकनाथः – सबके द्‌वारा याचना किये जाने योग्य लोकस्वामी,
माधवः – मधुकुल में उत्पन्न होने वाले,
भक्तवत्सलः – भक्तों से प्रेम करने वाले ॥91॥

**सुवर्णवर्णो हेमाङ्गो वराङ्गश्चन्दनाङ्गदी ।**
**वीरहा विषमः शून्यो घृताशीरचलश्चलः ॥92॥**

अर्थ –
सुवर्णवर्णः – सोने के समान पीतवर्ण वाले,
हेमाङ्गः – सोने के समान सुडौल चमकीले अंगों वाले,
वराङ्गः – परम श्रेष्ठ अंग-प्रत्यंगों वाले,
चन्दनाङ्गदी – चन्दन के लेप और बाजूबंद से सुशोभित,
वीरहा – राग-द्‌वेष आदि प्रबल शत्रुओं से डर कर शरण में आने वालों के अन्तःकरण में उनका अभाव कर देने वाले,

विषमः – जिनके समान दूसरा कोई नहीं, ऐसे अनुपम,
शून्यः – समस्त विशेषणों से रहित,
घृताशीः – अपने आश्रित जनों के लिये कृपा से सने हुए द्रवित संकल्प करने वाले,
अचलः – किसी प्रकार भी विचलित न होने वाले, अविचल,
चलः – वायुरूप से सर्वत्र गमन करने वाले ॥92॥

**अमानी मानदो मान्यो लोकस्वामी त्रिलोकधृक् ।**
**सुमेधा मेधजो धन्यः सत्यमेधा धराधरः ॥93॥**

अर्थ – अमानी – स्वयं मान न चाहने वाले, अभिमान रहित,
मानदः – दूसरों को मान देने वाले,
मान्यः – सबके पूजने योग्य माननीय,
लोकस्वामी – चौदह भुवनों के स्वामी,
त्रिलोकधृक् – तीनों लोकों को धारण करने वाले,
सुमेधाः – अति उत्तम सुन्दर बुद्धि वाले,
मेधजः – यज्ञ में प्रकट होने वाले,
धन्यः – नित्य कृतकृत्य होने के कारण सर्वथा धन्यवाद के पात्र,
सत्यमेधाः – सच्ची और श्रेष्ठ बुद्धि वाले,
धराधरः – अनन्त भगवान के रूप से पृथ्वी को धारण करने वाले ॥93॥

**तेजोवृषो द्युतिधरः सर्वशस्त्रभृतां वरः ।**
**प्रग्रहो निग्रहो व्यग्रो नैकशृङ्गो गदाग्रजः ॥94॥**

अर्थ –
तेजोवृषः – आदित्य रूप से तेज की वर्षा करने वाले और भक्तों पर अपने अमृतमय तेज की वर्षा करने वाले,
द्युतिधरः – परम कान्ति को धारण करने वाले,
सर्वशस्त्रभृतां वरः – समस्त शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ,
प्रग्रहः – भक्तों के द्वारा अर्पित पत्र-पुष्पादि को ग्रहण करने वाले,
निग्रहः – सबका निग्रह करने वाले,

व्यग्रः – अपने भक्तों को अभीष्ट फल देने में लगे हुए,
नैकशृङ्गः – नाम, आख्यात, उपसर्ग और निपात रूप चार सींगों को धारण करने वाले शब्दब्रह्म स्वरुप,
गदाग्रजः – गद से पहले जन्म लेने वाले ॥94॥

**चतुर्मूर्तिश्चतुर्बाहुश्चतुर्व्यूहश्चतुर्गतिः ।**
**चतुरात्मा चतुर्भावश्चतुर्वेदविदेकपात् ॥95॥**

अर्थ – चतुर्मूर्तिः – राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न रूप चार मूर्तियों वाले,
चतुर्बाहुः – चार भुजाओं वाले,
चतुर्व्यूहः – वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध, इन चार व्यूहों से युक्त,
चतुर्गतिः – सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य, सायुज्य रूप चार परम गति स्वरुप,
चतुरात्मा – मन, बुद्धि, अहंकार और चित्त रुप चार अन्तःकरण वाले,
चतुर्भावः – धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष – इन चारों पुरुषार्थों के उत्पत्ति स्थान,
चतुर्वेदवित् – चारों वेदों के अर्थ को भली भाँति जानने वाले,
एकपात् – एक पाद वाले यानी एक पाद ( अंश ) से समस्त विश्व को व्याप्त करने वाले ॥95॥

**समावर्तोऽनिवृत्तात्मा दुर्जयो दुरतिक्रमः ।**
**दुर्लभो दुर्गमो दुर्गो दुरावासो दुरारिहा ॥96॥**

अर्थ – समावर्तः – संसार चक्र को भली भाँति घुमाने वाले,
अनिवृत्तात्मा – सर्वत्र विद्यमान होने के कारण जिनका आत्मा कहीं से भी हटा हुआ नहीं है,
दुर्जयः – किसी से भी जीतने में न आने वाले,
दुरतिक्रमः – जिनकी आज्ञा का कोई उल्लंघन नहीं कर सके,
दुर्लभः – बिना भक्ति के प्राप्त न होने वाले,
दुर्गमः – कठिनता से जानने में आने वाले,
दुर्गः – कठिनता से प्राप्त होने वाले,
दुरावासः – बड़ी कठिनता से योगिजनों द्वारा हृदय में बसाये जाने वाले,
दुरारिहा – दुष्ट मार्ग में चलने वाले दैत्यों का वध करने वाले ॥96॥

**शुभाङ्गो लोकसारङ्गः सुतन्तुस्तन्तुवर्धनः ।**
**इन्द्रकर्मा महाकर्मा कृतकर्मा कृतागमः ॥97॥**

अर्थ –

शुभाङ्गः – कल्याण कारक नाम वाले,
लोकसारङ्गः – लोकों के सार को ग्रहण करने वाले,
सुतन्तुः – सुन्दर विस्तृत जगत रूप तन्तु वाले,
तन्तुवर्धनः – पूर्वोक्त जगत तन्तु को बढ़ाने वाले,
इन्द्रकर्मा – इन्द्र के समान कर्म वाले,
महाकर्मा – बड़े-बड़े कर्म करने वाले,
कृतकर्मा – जो समस्त कर्तव्य कर्म कर चुके हों,
जिनका कोई कर्तव्य शेष न रहा हो – ऐसे कृतकृत्य,
कृतागमः – अपने अवतार योनि के अनुरूप अनेक कार्यों को पूर्ण करने
के लिये अवतार धारण करके आने वाले ॥97॥

**उद्भवः सुन्दरः सुन्दो रत्ननाभः सुलोचनः ।**
**अर्को वाजसनः शृङ्गी जयन्तः सर्वविज्जयी ॥98॥**

अर्थ – 790 उद्भवः – स्वेच्छा से श्रेष्ठ जन्म धारण करने वाले, 791 सुन्दरः – सबसे अधिक भाग्यशाली होने के कारण परम सुन्दर, 792 सुन्दः – परम करुणाशील, 793 रत्ननाभः – रत्न के समान सुन्दर नाभि वाले, 794 सुलोचनः – सुन्दर नेत्रों वाले, 795 अर्कः – ब्रह्मादि पूज्य पुरुषों के भी पूजनीय, 796 वाजसनः – याचकों को अन्न प्रदान करने वाले, 797 शृङ्गी – प्रलयकाल में सींग युक्त मत्स्य विशेष का रूप धारण करने वाले, 798 जयन्तः – शत्रुओं को पूर्णतया जीतने वाले, 799 सर्वविज्जयी – सर्वज्ञ यानी सब कुछ जानने वाले और सबको जीतने वाले ॥98॥

**सुवर्णबिन्दुरक्षोभ्यः सर्ववागीश्वरेश्वरः ।**
**महाह्रदो महागर्तो महाभूतो महानिधिः ॥99॥**

अर्थ –

सुवर्णबिन्दुः – सुन्दर अक्षर और बिन्दु से युक्त ओंकार स्वरुप नाम ब्रह्म,
अक्षोभ्यः – किसी के द्वारा भी क्षुभित न किये जा सकने वाले,
सर्ववागीश्वरेश्वरः – समस्त वाणीपतियों के यानी ब्रह्मादि के भी स्वामी,
महाह्रदः – ध्यान करने वाले जिसमें गोता लगा कर आनन्द में मग्न होते हैं,

ऐसे परमानन्द के महान सरोवर,
महागर्तः – मायारूप महान गर्त वाले,
महाभूतः – त्रिकाल में कभी नष्ट न होने वाले महाभूत स्वरुप,
महानिधिः – सबके महान निवास स्थान ॥99॥

**कुमुदः कुन्दरः कुन्दः पर्जन्यः पावनोऽनिलः ।**
**अमृताशोऽमृतवपुः सर्वज्ञः सर्वतोमुखः ॥100॥**

अर्थ –
कुमुदः – कु अर्थात पृथ्वी को उसका भार उतार कर प्रसन्न करने वाले,
कुन्दरः – हिरण्याक्ष को मारने के लिये पृथ्वी को विदीर्ण करने वाले,
कुन्दः – कश्यप जी को पृथ्वी प्रदान करने वाले,
पर्जन्यः – बादल की भाँति समस्त इष्ट वस्तुओं की वर्षा करने वाले,
पावनः – स्मरण मात्र से पवित्र करने वाले,
अनिलः – सदा प्रबुद्ध रहने वाले,
अमृताशः – जिनकी आशा कभी विफल न हो – ऐसे अमोघ संकल्प,
अमृतवपुः – जिनका कलेवर कभी नष्ट न हो – ऐसे नित्य विग्रह,
सर्वज्ञः – सदा सर्वदा सब कुछ जानने वाले,
सर्वतोमुखः – सब ओर मुख वाले यानी जहाँ कहीं भी उनके भक्त
भक्तिपूर्वक पत्र-पुष्पादि जो कुछ भी अर्पण करें, उसे भक्षण करने वाले ॥100॥

**सुलभः सुव्रतः सिद्धः शत्रुजिच्छत्रुतापनः ।**
**न्यग्रोधोदुम्बरोऽश्वत्थश्चाणूरान्ध्रनिषूदनः ॥101॥**

अर्थ –
सुलभः – नित्य निरन्तर चिन्तन करने वाले को और एकनिष्ठ श्रद्धालु भक्त को
बिना ही परिश्रम के सुगमता से प्राप्त होने वाले,
सुव्रतः – सुन्दर भोजन करने वाले यानी अपने भक्तों द्वारा
प्रेमपूर्वक अर्पण किये हुए पत्र-पुष्पादि मामूली भोजन को भी परम श्रेष्ठ मान कर खाने वाले,
सिद्धः – स्वभाव से ही समस्त सिद्धियों से युक्त,

शत्रुजित् – देवता और सत्पुरुषों के शत्रुओं को अपने शत्रु मान कर जीतने वाले,
शत्रुतापनः – शत्रुओं को तपाने वाले,
न्यग्रोधः – वट वृक्ष रूप,
उदुम्बरः – कारण रूप से आकाश के भी ऊपर रहने वाले,
अश्वत्थः – पीपल वृक्ष स्वरुप,
चाणूरान्ध्रनिषूदनः – चाणूर नामक अन्ध्र जाति के वीर मल्ल को मारने वाले ॥101॥

**सहस्रार्चिः सप्तजिह्वः सप्तैधाः सप्तवाहनः ।**
**अमूर्तिरनघोऽचिन्त्यो भयकृद्भयनाशनः ॥102॥**

अर्थ – 826 सहस्रार्चिः – अनन्त किरणों वाले, 827 सप्तजिह्वः – काली, कराली, मनोजवा, सुलोहिता, धूम्रवर्णा, स्फुलिंगिनी और विश्वरूचि – इन सात जिह्वाओं वाले अग्नि स्वरुप, 828 सप्तैधाः – सात दीप्ति वाले अग्नि स्वरुप, 829 सप्तवाहनः – सात घोड़ों वाले सूर्य रूप, 830 अमूर्तिः – मूर्ति रहित निराकार, 831 अनघः – सब प्रकार से निष्पाप, 832 अचिन्त्यः – किसी प्रकार भी चिन्तन करने में न आने वाले, 833 भयकृत् – दुष्टों को भयभीत करने वाले, 834 भयनाशनः – स्मरण करने वालों के और सत्पुरुषों के भय का नाश करने वाले ॥102॥

**अनुर्बृहत्कृशः स्थूलो गुणभृन्निर्गुणो महान् ।**
**अधृतः स्वधृतः स्वास्यः प्राग्वंशो वंशवर्द्धनः ॥103॥**

अर्थ –
अणुः – अत्यन्त सूक्ष्म,
बृहत् – सबसे बड़े,
कृशः – अत्यन्त पतले और हलके,
स्थूलः – अत्यन्त मोटे और भारी,
गुणभृत् – समस्त गुणों को धारण करने वाले,
निर्गुणः – सत्त्व, रज और तम – इन तीनों गुणों से रहित,
महान् – गुण, प्रभाव, ऐश्वर्य और ज्ञान आदि की अतिशयता के कारण परम महत्व सम्पन्न,
अधृतः – जिनको कोई भी धारण नहीं कर सकता – ऐसे निराधार,
स्वधृतः – अपने आप से धारित यानी अपनी ही महिमा में स्थित,

स्वास्यः – सुन्दर मुख वाले,
प्राग्वंशः – जिनसे समस्त वंश परम्परा आरम्भ हुई है –
ऐसे समस्त पूर्वजों के भी पूर्वज आदि पुरुष,
वंशवर्द्धनः – जगत प्रपंच रूप वंश को और यादव वंश को बढ़ाने वाले ॥103॥

**भारभृत्कथितो योगी योगीशः सर्वकामदः ।**
**आश्रमः श्रमणः क्षामः सुपर्णो वायुवाहनः ॥104॥**

अर्थ –
भारभृत् – शेषनाग आदि के रूप में पृथ्वी का भार उठाने वाले
और अपने भक्तों के योगक्षेम रूप भार को वहन करने वाले,
कथितः – वेद-शास्त्र और महापुरुषों द्वारा जिनके गुण, प्रभाव, ऐश्वर्य
और स्वरुप का बारंबार कथन किया गया है, ऐसे सबके द्वारा वर्णित,
योगी – नित्य समाधि युक्त,
योगीशः – समस्त योगियों के स्वामी,
सर्वकामदः – समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाले,
आश्रमः – सबको विश्राम देने वाले,
श्रमणः – दुष्टों को संतप्त करने वाले,
क्षामः – प्रलय काल में सब प्रजा का क्षय करने वाले,
सुपर्णः – वेदरूप सुन्दर पत्तों वाले ( संसार वृक्ष स्वरुप ),
वायुवाहनः – वायु को गमन करने के लिये शक्ति देने वाले ॥104॥

**धनुर्धरो धनुर्वेदो दण्डो दमयिता दमः ।**
**अपराजितः सर्वसहो नियन्तानियमोऽयमः ॥105॥**

अर्थ –
धनुर्धरः – धनुषधारी श्रीराम,
धनुर्वेदः – धनुर्विद्या को जानने वाले श्रीराम ,
दण्डः – दमन करने वालों की दमन शक्ति,
दमयिता – यम और राजा आदि के रूप में दमन करने वाले,

दमः – दण्ड का कार्य यानी जिनको दण्ड दिया जाता है, उनका सुधार,
अपराजितः – शत्रुओं द्वारा पराजित न होने वाले,
सर्वसहः – सब कुछ सहन करने की सामर्थ्य से युक्त, अतिशय तितिक्षु,
नियन्ता – सबको अपने-अपने कर्तव्य में नियुक्त करने वाले,
अनियमः – नियमों से न बँधे हुए, जिनका कोई भी नियन्त्रण करने वाला नहीं, ऐसे परम स्वतन्त्र,
अयमः – जिनका कोई शासक नहीं अथवा मृत्यु रहित ॥105॥

**सत्त्ववान् सात्त्विकः सत्यः सत्यधर्मपरायणः ।**
**अभिप्रायः प्रियार्होऽर्हः प्रियकृत्प्रीतिवर्धनः ॥106॥**

अर्थ –
सत्त्ववान् – बल, वीर्य, सामर्थ्य आदि समस्त सत्त्वों से सम्पन्न,
सात्त्विकः – सत्त्वगुण प्रधान विग्रह,
सत्यः – सत्य भाषण स्वरुप,
सत्यधर्मपरायणः – यथार्थ भाषण और धर्म के परम आधार,
अभिप्रायः – प्रेमीजन जिनको चाहते हैं – ऐसे परम इष्ट,
प्रियार्हः – अत्यन्त प्रिय वस्तु समर्पण करने के लिये योग्य पात्र,
अर्हः – सबके परम पूज्य,
प्रियकृत् – भजने वालों का प्रिय करने वाले,
प्रीतिवर्धनः – अपने प्रेमियों के प्रेम को बढ़ाने वाले ॥106॥

**विहायसगतिर्ज्योतिः सुरुचिर्हुतभुग्विभुः ।**
**रविर्विरोचनः सूर्यः सविता रविलोचनः ॥107॥**

अर्थ –
विहायसगतिः – आकाश में गमन करने वाले,
ज्योतिः – स्वयं प्रकाश स्वरुप,
सुरुचिः – सुन्दर रूचि और कान्ति वाले,
हुतभुक् – यज्ञ में हवन की हुई समस्त हवि को अग्नि रूप से भक्षण करने वाले,
विभुः – सर्वव्यापी,

रविः – समस्त रसों का शोषण करने वाले सूर्य,
विरोचनः – विविध प्रकार से प्रकाश फैलाने वाले,
सूर्यः – शोभा को प्रकट करने वाले,
सविता – समस्त जगत को प्रसव यानी उत्पन्न करने वाले,
रविलोचनः – सूर्यरूप नेत्रों वाले ॥107॥

**अनन्तो हुतभुग्भोक्ता सुखदो नैकजोऽग्रजः ।**
**अनिर्विण्णः सदामर्षी लोकाधिष्ठानमद्भुतः ॥108॥**

अर्थ –
अनन्तः – सब प्रकार से अन्त रहित,
हुतभुक् – यज्ञ में हवन की हुई सामग्री को उन-उन देवताओं के रूप में भक्षण करने वाले,
भोक्ता – प्रकृति को भोगने वाले,
सुखदः – भक्तों को दर्शन रूप परम सुख देने वाले,
नैकजः – धर्मरक्षा, साधुरक्षा आदि परम विशुद्ध हेतुओं से स्वेच्छा पूर्वक अनेक जन्म धारण करने वाले,
अग्रजः – सबसे पहले जन्मने वाले आदि पुरुष,
अनिर्विण्णः – पूर्णकाम होने के कारण विरक्ति से रहित,
सदामर्षी – सत्पुरुषों पर क्षमा करने वाले,
लोकाधिष्ठानम् – समस्त लोकों के आधार,
अद्भुतः – अत्यन्त आश्चर्यमय ॥108॥

**सनात्सनातनतमः कपिलः कपिरप्ययः ।**
**स्वस्तिदः स्वस्तिकृत्स्वस्ति स्वस्तिभुक्स्वस्तिदक्षिणः ॥109॥**

अर्थ – 896 सनात् – अनन्त काल स्वरुप, 897 सनातनतमः – सबके कारण होने से ब्रह्मादि पुरुषों की अपेक्षा भी परम पुराण पुरुष, 898 कपिलः – महर्षि कपिल, 899 कपिः – सूर्यदेव, 900 अप्ययः – सम्पूर्ण जगत के लय स्थान, 901 स्वस्तिदः – परमानन्द रूप मंगल देने वाले, 902 स्वस्तिकृत् – आश्रित जनों का कल्याण करने वाले, 903 स्वस्ति – कल्याण स्वरुप, 904 स्वस्तिभुक् – भक्तों के परम कल्याण की रक्षा करने वाले, 905 स्वस्तिदक्षिणः – कल्याण करने में समर्थ और शीघ्र कल्याण करने वाले ॥109॥

**अरौद्रः कुण्डली चक्री विक्रम्यूर्जितशासनः ।**
**शब्दातिगः शब्दसहः शिशिरः शर्वरीकरः ॥110॥**

अर्थ –
अरौद्रः – सब प्रकार के रूद्र ( क्रूर ) भावों से रहित शान्त मूर्ति,
कुण्डली – सूर्य के समान प्रकाशमान मकराकृत कुण्डलों को धारण करने वाले,
चक्री – सुदर्शन चक्र को धारण करने वाले,
विक्रमी – सबसे विलक्षण पराक्रमशील,
ऊर्जितशासनः – जिनका श्रुति – स्मृतिरूप शासन अत्यन्त श्रेष्ठ है –
ऐसे अति श्रेष्ठ शासन करने वाले,
शब्दातिगः – शब्द की जहाँ पहुँच नहीं, ऐसे वाणी के अविषय,
शब्दसहः – समस्त वेदशास्त्र जिनकी महिमा का बखान करते हैं,
शिशिरः – त्रिताप पीड़ितों को शान्ति देने वाले शीतल मूर्ति,
शर्वरीकरः – ज्ञानियों की रात्रि संसार और अज्ञानियों की रात्रि ज्ञान –
इन दोनों को उत्पन्न करने वाले ॥110॥

**अक्रूरः पेशलो दक्षो दक्षिणः क्षमिणां वरः ।**
**विद्वत्तमो वीतभयः पुण्यश्रवणकीर्तनः ॥111॥**

अर्थ –
अक्रूरः – सब प्रकार के क्रूर भावों से रहित,
पेशलः – मन, वाणी और कर्म – सभी दृष्टियों से सुन्दर होने के कारण परम सुन्दर,
दक्षः – सब प्रकार से समृद्ध, परम शक्तिशाली और क्षण मात्र में बड़े से बड़ा कार्य कर देने वाले महान कार्य कुशल,
दक्षिणः – संहारकारी,
क्षमिणां वरः – क्षमा करने वालों में सर्वश्रेष्ठ,
विद्वत्तमः – विद्वानों में सर्वश्रेष्ठ परम विद्वान,
वीतभयः – सब प्रकार के भय से रहित,
पुण्यश्रवणकीर्तनः – जिनके नाम, गुण, महिमा और स्वरुप का श्रवण
और कीर्तन परम पुण्य यानी परम पावन है ॥111॥

**उत्तारणो दुष्कृतिहा पुण्यो दुःस्वप्ननाशनः ।**
**वीरहा रक्षणः सन्तो जीवनः पर्यवस्थितः ॥112॥**

अर्थ –

उत्तारणः – संसार सागर से पार करने वाले,

दुष्कृतिहा – पापों का और पापियों का नाश करने वाले,

पुण्यः – स्मरण आदि करने वाले समस्त पुरुषों को पवित्र कर देने वाले,

दुःस्वप्ननाशनः – ध्यान, स्मरण, कीर्तन और पूजन करने से बुरे स्वप्नों का और संसार रूप दुःस्वप्न का नाश करने वाले,

वीरहा – शरणागतों की विविध गतियों का यानी संसार चक्र का नाश करने वाले,

रक्षणः – सब प्रकार से रक्षा करने वाले,

सन्तः – विद्या और विनय का प्रचार करने के लिये संतों के रूप में प्रकट होने वाले,

जीवनः – समस्त प्रजा को प्राणरूप से जीवित रखने वाले ॥112॥

**अनन्तरूपोऽनन्तश्रीर्जितमन्युर्भयापहः ।**
**चतुरस्रो गभीरात्मा विदिशो व्यादिशो दिशः ॥113॥**

अर्थ –

अनन्तरूपः – अनन्त अमित रूप वाले,

अनन्तश्रीः – अनन्तश्री यानी अपरिमित पराशक्तियों से युक्त,

जितमन्युः – सब प्रकार से क्रोध को जीत लेने वाले,

भयापहः – भक्त भयहारी,

चतुरस्रः – चार वेदरूप कोणों वाले मंगलमूर्ति और न्यायशील,

गभीरात्मा – गम्भीर मन वाले,

विदिशः – अधिकारियों को उनके कर्मानुसार विभागपूर्वक नाना प्रकार के फल देने वाले,

व्यादिशः – सबको यथायोग्य विविध आज्ञा देने वाले,

दिशः – वेदरूप से समस्त कर्मों का फल बतलाने वाले ॥113॥

**अनादिर्भूर्भुवो लक्ष्मीः सुवीरो रुचिराङ्गदः ।**
**जननो जनजन्मादिर्भीमो भीमपराक्रमः ॥114॥**

अर्थ –
अनादिः – जिसका आदि कोई न हो ऐसे सबके कारण स्वरुप,
भूर्भुवः – पृथ्वी के भी आधार,
लक्ष्मीः – समस्त शोभायमान वस्तुओं की शोभा,
सुवीरः – आश्रित जनों के अन्तःकरण में सुन्दर कल्याणमयी विविध स्फुरणा करने वाले,
रुचिराङ्गदः – परम रुचिकर कल्याणमय बाजूबन्दों को धारण करने वाले,
जननः – प्राणिमात्र को उत्पन्न करने वाले,
जनजन्मादिः – जन्म लेने वालों के जन्म के मूल कारण,
भीमः – सबको भय देने वाले,
भीमपराक्रमः – अतिशय भय उत्पन्न करने वाले, पराक्रम से युक्त ॥114॥

**आधारनिलयोऽधाता पुष्पहासः प्रजागरः ।**
**ऊर्ध्वगः सत्पथाचारः प्राणदः प्रणवः पणः ॥115॥**

अर्थ –
आधारनिलयः – आधार स्वरुप पृथ्वी आदि समस्त भूतों के स्थान,
अधाता – जिसका कोई भी बनाने वाला न हो ऐसे स्वयं स्थित,
पुष्पहासः – पुष्प की भाँति विकसित हास्य वाले,
प्रजागरः – भली प्रकार जाग्रत रहने वाले नित्य प्रबुद्ध,
ऊर्ध्वगः – सबसे ऊपर रहने वाले,
सत्पथाचारः – सत्पुरुषों के मार्ग का आचरण करने वाले मर्यादा पुरुषोत्तम,
प्राणदः – परीक्षित आदि मरे हुए को भी जीवन देने वाले,
प्रणवः – ॐकार स्वरुप,
पणः – यथायोग्य व्यवहार करने वाले ॥115॥

**प्रमाणं प्राणनिलयः प्राणभृत्प्राणजीवनः ।**
**तत्त्वं तत्त्वविदेकात्मा जन्ममृत्युजरातिगः ॥116॥**

अर्थ –

प्रमाणम् – स्वतः सिद्ध होने से स्वयं प्रमाण स्वरुप,

प्राणनिलयः – प्राणों के आधारभूत,

प्राणभृत् – समस्त प्राणों का पोषण करने वाले,

प्राणजीवनः – प्राणवायु के संचार से प्राणियों को जीवित रखने वाले,

तत्त्वम् – यथार्थ तत्त्व रूप,

तत्त्ववित् – यथार्थ तत्त्व को पूर्णतया जानने वाले,

एकात्मा – अद्‌वितीय स्वरुप,

जन्ममृत्युजरातिगः – जन्म, मृत्यु और बुढ़ापा आदि शरीर के धर्मों से सर्वथा अतीत ॥116॥

**भूर्भुवःस्वस्तरुस्तारः सविता प्रपितामहः ।**
**यज्ञो यज्ञपतिर्यज्वा यज्ञाङ्गो यज्ञवाहनः ॥117॥**

अर्थ –

भूर्भुवःस्वस्तरुः – भूः, भुवः, स्वः रूप तीनों लोकों को व्याप्त करने वाले और संसार वृक्ष स्वरुप,

तारः – संसार सागर से पार उतारने वाले,

सविता – सबको उत्पन्न करने वाले पितामह,

प्रपितामहः – पितामह ब्रह्मा के भी पिता,

यज्ञः – यज्ञ स्वरुप,

यज्ञपतिः – समस्त यज्ञों के अधिष्ठाता,

यज्वा – यजमान रूप से यज्ञ करने वाले,

यज्ञाङ्गः – समस्त यज्ञरूप अंगों वाले,

यज्ञवाहनः – यज्ञों को चलाने वाले ॥117॥

**यज्ञभृद्‌यज्ञकृद्‌यज्ञी यज्ञभुग्यज्ञसाधनः ।**
**यज्ञान्तकृद्‌यज्ञगुह्यमन्नमन्नाद एव च ॥118॥**

अर्थ –

यज्ञभृत् – यज्ञों का धारण पोषण करने वाले,

यज्ञकृत् – यज्ञों के रचयिता,

यज्ञी – समस्त यज्ञ जिसमें समाप्त होते हैं – ऐसे यज्ञशेषी,
यज्ञभुक् – समस्त यज्ञों के भोक्ता,
यज्ञसाधनः – ब्रह्मयज्ञ, जपयज्ञ आदि बहुत से यज्ञ जिनकी प्राप्ति के साधन हैं,
यज्ञान्तकृत् – यज्ञों का अन्त करने वाले यानी उनका फल देने वाले,
यज्ञगुह्यम् – यज्ञों में गुप्त ज्ञान स्वरुप और निष्काम यज्ञ स्वरुप,
अन्नम् – समस्त प्राणियों का अन्न की भाँति उनकी सब प्रकार से तुष्टि-पुष्टि करने वाले,
अन्नादः – समस्त अन्नों के भोक्ता ॥118॥

**आत्मयोनिः स्वयंजातो वैखानः सामगायनः ।**
**देवकीनन्दनः स्रष्टा क्षितीशः पापनाशनः ॥119॥**

अर्थ –
आत्मयोनिः – जिनका कारण दूसरा कोई नहीं – ऐसे स्वयं योनि स्वरुप,
स्वयंजातः – स्वयं अपने आप स्वेच्छापूर्वक प्रकट होने वाले,
वैखानः – पातालवासी हिरण्याक्ष का वध करने के लिये पृथ्वी को खोदने वाले,
सामगायनः – सामवेद का गान करने वाले,
देवकीनन्दनः – देवकी पुत्र,
स्रष्टा – समस्त लोकों के रचयिता,
क्षितीशः – पृथ्वीपति,
पापनाशनः – स्मरण, कीर्तन, पूजन और ध्यान आदि करने से
समस्त पाप समुदाय का नाश करने वाले ॥119॥

**शङ्खभृन्नन्दकी चक्री शार्ङ्गधन्वा गदाधरः ।**
**रथाङ्गपाणिरक्षोभ्यः सर्वप्रहरणायुधः ॥120॥**

अर्थ –
पांचजन्य शंख को धारण करने वाले,
नन्दकी – नन्दक नामक खड्ग धारण करने वाले,
चक्री – संसार चक्र को चलाने वाले,
शार्ङ्गधन्वा – शार्ङ्ग धनुषधारी,

गदाधरः – कौमोदकी नाम की गदा धारण करने वाले,
रथाङ्गपाणिः – भीष्म की प्रतिज्ञा रखने के लिये सुदर्शन चक्र को हाथ में धारण करने वाले,
अक्षोभ्यः – जो किसी प्रकार भी विचलित नहीं किये जा सके,
सर्वप्रहरणायुधः – ज्ञात और अज्ञात जितने भी युद्ध भूमि में काम करने वाले हथियार हैं,
उन सबको धारण करने वाले ॥120॥

**॥ सर्वप्रहरणायुध ॐ नम इति ॥**

यहाँ हजार नामों की समाप्ति दिखलाने के लिये अन्तिम नाम को दुबारा लिखा गया है।
मंगलवाची होने से ॐकार का स्मरण किया गया है। अन्त में नमस्कार करके भगवान की पूजा की गयी है।

**इतीदं कीर्तनीयस्य केशवस्य महात्मनः ।**
**नाम्नां सहस्रं दिव्यानामशेषेण प्रकीर्तितम् ॥121॥**

अर्थ – इस प्रकार यह कीर्तन करने योग्य महात्मा केशव के दिव्य
एक हजार नामों का पूर्ण रूप से वर्णन कर दिया ॥121॥

**य इदं शृणुयान्नित्यं यश्चापि परिकीर्तयेत् ।**
**नाशुभं प्राप्नुयात्किञ्चित्सोऽमुत्रेह च मानवः ॥122॥**

अर्थ – जो मनुष्य इस विष्णु सहस्रनाम का सदा श्रवण करता है
और जो प्रतिदिन इसका कीर्तन या पाठ करता है,
उसका इस लोक में तथा परलोक में कहीं भी कुछ अशुभ नहीं होता ॥122॥

**वेदान्तगो ब्राह्मणः स्यात्क्षत्रियो विजयी भवेत् ।**
**वैश्यो धनसमृद्धः स्याच्छूद्रः सुखमवाप्नुयात् ॥123॥**

अर्थ – इस विष्णु सहस्रनाम का पाठ करने से अथवा कीर्तन करने से
ब्राह्मण वेदान्त पारगामी हो जाता है यानी उपनिषदों के अर्थरूप परब्रह्म को पा लेता है।
क्षत्रिय युद्ध में विजय पाता है, वैश्य व्यापार में धन पाता है और शूद्र सुख पाता है ॥123॥

**धर्मार्थी प्राप्नुयाद्धर्ममर्थार्थी चार्थमाप्नुयात् ।**
**कामानवाप्नुयात्कामी प्रजार्थी प्राप्नुयात्प्रजाम् ॥124॥**

अर्थ – धर्म की इच्छा वाला धर्म को पाता है, अर्थ की इच्छा वाला अर्थ पाता है,
भोगों की इच्छा वाला भोग पाता है और प्रजा की इच्छा वाला प्रजा पाता है ॥124॥

**भक्तिमान्यः सदोत्थाय शुचिस्तद्गतमानसः ।**
**सहस्रं वासुदेवस्य नाम्नामेतत्प्रकीर्तयेत् ॥125॥।**

**यशः प्राप्नोति विपुलं ज्ञातिप्राधान्यमेव च ।**
**अचलां श्रियमाप्नोति श्रेयः प्राप्नोत्यनुत्तमम् ॥126॥।**

**न भयं क्वचिदाप्नोति वीर्यं तेजश्च विन्दति ।**
**भवत्यरोगो द्युतिमान्बलरूपगुणान्वितः ॥127॥**

अर्थ – जो भक्तिमान पुरुष सदा प्रातःकाल में उठ कर स्नान करके
पवित्र हो मन में विष्णु का ध्यान करता हुआ इस वासुदेव सहस्रनाम का
भली प्रकार पाठ करता है, वह महान यश पाता है, जाति में महत्व पाता है,
अचल सम्पत्ति पाता है और अति उत्तम कल्याण पाता है तथा
उसको कहीं भय नहीं होता। वह वीर्य और तेज को पाता है तथा
आरोग्यवान, कान्तिमान, बलवान, रूपवान और सर्वगुण सम्पन्न हो जाता है ॥125 – 127॥

**रोगार्तो मुच्यते रोगाद् बद्धो मुच्येत बन्धनात् ।**
**भयान्मुच्येत भीतस्तु मुच्येतापन्न आपदः ॥128॥**

अर्थ – रोगातुर पुरुष रोग से छूट जाता है, बन्धन में पड़ा हुआ पुरुष बन्धन से छूट जाता है,
भयभीत भय से छूट जाता है और आपत्ति में पड़ा हुआ आपत्ति से छूट जाता है ॥128॥

**दुर्गाण्यतितरत्याशु पुरुषः पुरुषोत्तमम् ।**
**स्तुवन्नामसहस्रेण नित्यं भक्तिसमन्वितः ॥129॥**

अर्थ – जो पुरुष भक्ति सम्पन्न होकर इस विष्णु सहस्रनाम से पुरुषोत्तम भगवान की प्रतिदिन स्तुति करता है,
वह शीघ्र ही समस्त संकटों से पार हो जाता है ॥129॥

**वासुदेवाश्रयो मर्त्यो वासुदेवपरायणः ।**
**सर्वपापविशुद्धात्मा याति ब्रह्म सनातनम् ॥130॥**

अर्थ – जो मनुष्य वासुदेव के आश्रित और उनके परायण है,
वह समस्त पापों से छूट कर विशुद्ध अन्तःकरण वाला हो सनातन परब्रह्म को पाता है ॥130॥

**न वासुदेवभक्तानामशुभं विद्यते क्वचित् ।**
**जन्ममृत्युजराव्याधिभयं नैवोपजायते ॥131॥**

अर्थ – वासुदेव के भक्तों का कहीं भी अशुभ नहीं होता है तथा उनको जन्म,
मृत्यु, जरा और व्याधि का भी भय नहीं रहता है ॥131॥

**इमं स्तवमधीयानः श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ।**
**युज्येतात्मसुखक्षान्तिश्रीधृतिस्मृतिकीर्तिभिः ॥132॥**

अर्थ – जो पुरुष श्रद्धापूर्वक भक्ति भाव से इस विष्णु सहस्रनाम का पाठ करता है,
वह आत्मसुख, क्षमा, लक्ष्मी, धैर्य, स्मृति और कीर्ति को पाता है ॥132॥

**न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभा मतिः ।**
**भवन्ति कृतपुण्यानां भक्तानां पुरुषोत्तमे ॥133॥**

अर्थ – पुरुषोत्तम के पुण्यात्मा भक्तों को किसी दिन क्रोध नहीं आता,
ईर्ष्या उत्पन्न नहीं होती, लोभ नहीं होता और उनकी बुद्धि कभी अशुद्ध नहीं होती ॥133॥

**द्यौः सचन्द्रार्कनक्षत्रा खं दिशो भूर्महोदधिः ।**
**वासुदेवस्य वीर्येण विधृतानि महात्मनः ॥134॥**

अर्थ – स्वर्ग, सूर्य, चन्द्रमा तथा नक्षत्र सहित आकाश, दस दिशाएँ,
पृथ्वी और महासागर – ये सब महात्मा वासुदेव के वीर्य से धारण किये गये हैं ॥134॥

**ससुरासुरगन्धर्वं सयक्षोरगराक्षसम् ।**
**जगद्वशे वर्ततेदं कृष्णस्य सचराचरम् ॥135॥**

अर्थ – देवता, दैत्य, गन्धर्व, यक्ष, सर्प और राक्षस सहित
यह स्थावर-जंगम रूप सम्पूर्ण जगत श्रीकृष्ण के अधीन रह कर यथा योग्य बरत रहे हैं ॥135॥

**इन्द्रियाणि मनो बुद्धिः सत्त्वं तेजो बलं धृतिः ।**
**वासुदेवात्मकान्याहुः क्षेत्रं क्षेत्रज्ञ एव च ॥136॥**

अर्थ – इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, सत्त्व, तेज, बल, धीरज, क्षेत्र ( शरीर ), और क्षेत्रज्ञ ( आत्मा ) –
ये सब श्री वासुदेव के रूप हैं, ऐसा वेद कहते हैं ॥136॥

**सर्वागमानामाचारः प्रथमं परिकल्पते ।**
**आचारप्रभवो धर्मो धर्मस्य प्रभुरच्युतः ॥137॥**

अर्थ – सब शास्त्रों में आचार प्रथम माना जाता है, आचार से ही धर्म की उत्पत्ति होती है
और धर्म के स्वामी भगवान अच्युत हैं ॥137॥

**ऋषयः पितरो देवा महाभूतानि धातवः ।**
**जङ्गमाजङ्गमं चेदं जगन्नारायणोद्भवम् ॥138॥**

अर्थ – ऋषि, पितर, देवता, पंच महाभूत, धातुएँ और स्थावर-जंगम रूप सम्पूर्ण जगत –
ये सब नारायण से ही उत्पन्न हुए हैं ॥138॥

**योगो ज्ञानं तथा सांख्यं विद्याः शिल्पादि कर्म च ।**
**वेदाः शास्त्राणि विज्ञानमेतत्सर्वं जनार्दनात् ॥139॥**

अर्थ – योग, ज्ञान, सांख्य, विद्याएँ, शिल्प आदि कर्म, वेद, शास्त्र और विज्ञान –
ये सब विष्णु से उत्पन्न हुए हैं ॥139॥

**एको विष्णुर्महद्भूतं पृथग्भूतान्यनेकशः ।**
**त्रींल्लोकान्व्याप्य भूतात्मा भुङ्क्ते विश्वभुगव्ययः ॥140॥**

अर्थ – वे समस्त विश्व के भोक्ता और अविनाशी विष्णु ही एक ऐसे हैं,
जो अनेक रूपों में विभक्त होकर भिन्न – भिन्न भूत विशेषों के अनेकों रूपों को धारण कर रहे हैं
तथा त्रिलोकी में व्याप्त होकर सबको भोग रहे हैं ॥140॥

**इमं स्तवं भगवतो विष्णोर्व्यासेन कीर्तितम् ।**
**पठेद्य इच्छेत्पुरुषः श्रेयः प्राप्तुं सुखानि च ॥141॥**

अर्थ – जो पुरुष परम श्रेय और सुख पाना चाहता हो वह भगवान व्यासजी के कहे हुए
इस विष्णु सहस्रनाम स्तोत्र का पाठ करे ॥141॥

**विश्वेश्वरमजं देवं जगतः प्रभवाप्ययम् ।**
**भजन्ति ये पुष्कराक्षं न ते यान्ति पराभवम् ॥142॥**

अर्थ – जो विश्व के ईश्वर जगत की उत्पत्ति, स्थिति और विनाश करने वाले जन्मरहित कमललोचन
भगवान विष्णु का भजन करते हैं, वे कभी पराभव नहीं पाते हैं ॥142॥

**॥ इस प्रकार श्री विष्णु सहस्रनाम स्तोत्रम् सम्पूर्ण हुआ ॥**